गुरुवाणी

परम पूज्य परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज

न

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन महात्मा डॉ. करतार सिंह जी महाराज के प्रवचनों के संकलित अंश)

रामाश्रम सत्संग (रजि.) SE-297, शास्त्री नगर ,हापुड़ रोड, ग़ाज़ियाबाद (उत्तर प्रदेश)

----- अनुक्रमाणिका ----

क्रम संख्या	प्रवचन	पृष्ठ क्रमांक
1	अ पनी बढ़ाई व दूसरों की निन्दा सुनना सब पसन्द करते हैं	5
2	अहंकार से प्रभु नहीं मिलते, चाहे कोई भी साधन करें	6
3	आगे संस्कार न बनें	7
4	आपके भीतर उस परमात्मा का अंश है जो सबके भीतर है	8
5	इन्द्रियों को वश में लाना होगा	9
6	ऊँचे अभ्यासी जो भी साधना करते हैं	10
7	गुरु कभी रूठता नहीं	11
8	गुरु भक्ति कैसे की जाये	12
9	चित्त,बुद्धि एवं विचार शुद्ध होने चाहिए	13
10	जब तक आपके भीतर में 'मैं' अर्थात अहंकार है	14
11	जब तक इस संसार तथा यहाँ की चीज़ों के प्रति हमारी आसक्ति है	15
12	जीवन का लक्ष्य है निर्मल होना	16
13	जो दीन होते हैं, संत, भक्त होते हैं	17
14	दीक्षा लेने का मतलब है	18

15	परमार्थ के पथ पर कभी संतुष्ट नहीं होना चाहिए	19
16	परिवार में एक दूसरे से सहयोग होना चाहिए	20
17	पूजा में बैठने से पहले अपनी इच्छा शक्ति को नियंत्रित करें	21
18	पूजा से पहले स्तुति गाते हैं	22
19	प्रभु करुणा सागर हैं, दयानिधि हैं	23
20	प्रार्थना करने, मनन करने, आचार विचार शुद्धि के बिना रास्ता नहीं मिलेगा	24
21	बिना सद्गुणों को अपनाये हुए सच्ची भक्ति नहीं हो सकती	25
22	भक्ति मुख्यतः नौ प्रकार की होती है	26
23	मन का स्वभाव है वेवजह सोचना	27
24	महापुरुष कहते हैं जितना विशाल सागर है, उससे भी विशाल हमारे अवगुण हैं	28
25	महापुरुषों का आशीर्वाद लेने के लिए हम उनके चरणों में बैठते हैं	29
26	मैं बार-बार कहता हूँ तथा मेरा यह निजी तज़ुर्बा है	30
27	मौन का अर्थ क्या है, समझ लेना चाहिए	31
28	लोग बाग़ कहते हैं कि हमारा मन एकाग्र नहीं होता	32
29	संतों के जीवन को अपनायें	33
30	सत्संग में साधना कराने वाला विचार विमुक्त होकर बैठे	34
31	सन्यासी को जब सन्यास की दीक्षा दी जाती है	35
32	सब बातों का आधार चरित्र निर्माण करना है	36
33	समर्पण का अर्थ है अपनी गति को परमात्मा की गति में मिला देना	37
34	सारे दुखों का कारण मनुष्य स्वयं है	38
35	सेवा कई प्रकार की होती है	39
36	ईश्वर सर्वज्ञ है, सर्वव्यापक है	40
37	हम क्या करें, अभी तक पूजा में हमारा मन नहीं लगता	41
38	हम सब के लिए आवश्यक है कि हम त्याग करें	42
39	हमारे जीवन का कुछ तो लक्ष्य होना चाहिए	43

40	हमारे भीतर में राग द्वेष की भावना न हो	
41	हमारे मन में जब तक कर्ता भाव रहेगा	44
42	हमारे यहाँ का तरीक़ा कश्फ़ यानी खेंच का है	45
43	हमारे यहाँ का साधन प्रेम का साधन है	46
44	हमारे व्यव्हार में दीनता, मधुरता व प्रेम होना चाहिए	47
45	हमेशा स्व-निरीक्षण करते रहना चाहिए	48
46	हर साधक का यह पुनीत कर्म व धर्म है	49
47	साधना में जब तक मन शुद्ध न हो जाये	50
48	सारे आवरणों को हटा कर आत्मा को परमात्मा में विलय करने के लिए	51
49	गुरु के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए	52
50	मनुष्य के भीतर में अतीत का इतिहास लिखा है	53

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

अपनी बढ़ाई व दूसरों की निन्दा सुनना हम सब पसन्द करते हैं ! हमें यह सब नहीं करना है ! किसी के प्रति आलोचना न करें ! दूसरों को छोटा बनाने का प्रयास न करें ! भूलकर भी किसी की बुराई न करें ! किसी को छोटा मत समझो ! हमारे यहाँ यह तप है कि लोग हमें बुरा-भला कहें और हम उसे बर्दाश्त कर लें ! आप पायेंगे कि आप आत्मा के कितने नज़दीक हैं ! हमेशा अपनी बुराई भी न करें ! हफ्ते में एक बार स्व-निरीक्षण करना चाहिए ताकि आपकी साधना सही बने !

****

परमात्मा की कृपा, परमात्मा की प्रेम वृष्टि, सब पर, प्रतिक्षण, एक जैसी पड़ती है ! हमें केवल इस वृष्टि को ग्रहण करने का ढंग सीखना है ! यह बड़ा सरल है ! सुख आसन पर बैठ जाइये या जैसे भी आपको आराम मिले, ज़मीन पर, कुर्सी पर या खाट पर, बैठें, यह आपकी इच्छा है ! शरीर ढीला हो, जैसे खूंटी पर कपडा टंगा होता है, अपना कोई बल न हो ! इस ख़्याल को लेकर बैठें कि ईश्वर की कृपा बरस रही है ! अधिक से अधिक पाँच मिनिट लगेंगे कि आपको इस वृष्टि की अनुभूति होने लगेगी ! दो, चार, दस, दिन निरन्तर, नियमित यह अभ्यास करते रहें तो ऐसा अनुभव होगा कि आपका शरीर बाहर और भीतर में कपडे की तरह भींग गया है ! यह अभ्यास बच्चे से लेकर बूढ़े तक प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है ! समर्पण का श्री गणेश यहीं से होता है ! धीरे-धीरे परमात्मा की उपस्थिति का भान होने लगता है ! जैसे ही हमें यह अहसास होने लगता है कि वह ईश्वर हमें देख रहा है, हम उसकी सेवा में बैठे हैं, तब हमारे भीतर में भय और भाव उत्पन्न होता है !

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

अहंकार से प्रभु नहीं मिलते, चाहे कोई भी साधन करें ! दीनता को तो अपनाना ही होगा ! यदि हम हृदय से, सत्यता से, प्रभु से क्षमा माँगेंगे और पश्चाताप करेंगे और आगे के लिए संकल्प करेंगे और कोशिश करेंगे कि हम से गलतियाँ न हों, तो प्रभु क्षमा कर देते हैं ! प्रार्थना से हमें प्रभु की कृपा-प्रसादी मिलती है जो हर वक्त हमारा मार्गदर्शन करती रहती है !

****

ईश्वर से, गुरु से, उसकी कृपा के लिए दीनता पूर्वक प्रार्थना करते रहना चाहिये ! इससे हमारा रास्ता सरल हो जाता है ! हम जिस परिस्थिति में हैं, उससे संतुष्ट रहना चाहिये ! हमें जो कुछ भगवान ने दिया है उसमें सन्तुष्ट रहना और जो कुछ भगवान हमारे लिए करते हैं, उसकी गति में अपनी गति मिला देना ही सन्तोष है ! चाहे जैसी भी परिस्थिति हो, सन्तोष का जीवन बनायें ! सत हमारा लक्ष्य है, ध्येय है ! उसकी प्राप्ति के लिए सन्तोष को अपनाना पड़ेगा ! भीतर में निर्मल हों, हमारा व्यवहार भी निर्मल हो, शरीर निर्मल हो, वाणी निर्मल हो, जीवन में तब सन्तोष आ जाता है ! जिस अवस्था में भी प्रभु ने रखा है, उसमें खुश रहें !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

आगे संस्कार न बनें, इसके लिए पूज्य गुरुदेव ने आपको जो अभ्यास बताया है उसे दृढ़ता पूर्वक ग्रहण करके, उस अभ्यास को करते रहना चाहिए ! मोटे ढंग से, संत मत के अभ्यास में, आँख, कान और जबान - इन तीन प्रमुख इन्द्रियों पर प्रतिबन्ध लगाना होता है !

आँख ऐसी इंद्री है जिससे एक जगह खड़ा होकर मनुष्य बहुत दूर तक का ज्ञान प्राप्त कर सकता है ! इसलिए यह संस्कार जोड़ने में प्रमुख भूमिका अदा करती है ! इस पर नियंत्रण रखने के लिए संतों ने कहा है कि इन चर्म-चक्षुओं (स्थूल आँखों) से अपने पैरों के आगे देखना चाहिए जिससे ठोकर न लगे या पैरों में कोई चीज़ चुभ न जाये ! नाच, तमाशा और सिनेमा वगैरह देखना संस्कार बनाने और बढ़ाने में अत्यन्त प्रभावी रूप से सहायक होते हैं ! अतः इनसे बचते रहने का आदेश है !

जिह्वा से, गुरु ने जो नाम दिया है, उस नाम को लेते रहें ! अनाप-शनाप, अनर्गल वार्ता से अपने को अलग रखें ! आज के समाज में समय काटने के लिए लोग बहुधा फ़िज़ूल की बातें करते हैं जिससे किसी का उपकार नहीं होता, बल्कि अपना और औरों का अहित ही होता है और नए संस्कार बनते हैं ! जिह्वा का उपयोग प्रभु के गुणगान में करना उचित है ! जिह्वा स्वाद का रस लेने वाली इन्द्रिय भी है ! अतः खान-पान में संयम बरतें ! भोजन में भी जो चीज़ बहुत अच्छी लगे, उसे कम से कम लें, वरना उसका भी संस्कार बन जायेगा यानी उस चीज़ में हमारी आसक्ति बढ़ जायेगी !

तीसरी इन्द्रिय कान का उपयोग प्रभु की महिमा का गुणगान करने, धार्मिक वार्तायें सुनने, आदि में करें ! गलत, अश्लील बातें न सुनें ! अन्दर के कानों से अनहद शब्द, जो यदि गुरुदेव ने आपको बताया हो तो, उसे सुनने की कोशिश तथा अभ्यास करें ! इस तरह यथा संभव एकान्त तथा संयम का जीवन बिताने से आगे संस्कार कम बनेंगे ! (संत-प्रसादी : **12)**

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

आपके भीतर उस परमात्मा का अंश है जो सबके भीतर है ! आपको उस अंश का विकास अपने भीतर में करना है ! उस आत्मा के जो गुण हैं वे गुण अपनाने हैं ! गुरु के जो गुण हैं उन्हें अपनाकर उन गुणों का विकास करना है ! अपना भी उद्धार करना है और संसार का भी उद्धार करना है ! आपके सम्पर्क में जो भी व्यक्ति आवे उसे आपको अपने व्यवहार से प्रेरणा देनी है कि वह भी अपने आदर्श के प्रति विचारशील होवे ! आपका जीवन सद्‌गुणों से भरा हो ! संसार अज्ञान में है, अपने जीवन को आदर्शमय बना कर उसे ज्ञान का प्रकाश दें ! हम आत्मा हैं, वह परमात्मा है, वह सागर है, हम उसकी एक बूँद हैं !

****

राम की शरण लेने से, ईश्वर के चरणों के समीप होने से हमें शारीरिक और मानसिक बल मिलता है ! बौद्धिक बल यानी विवेक और वैराग्य उत्पन्न हो जाते हैं और सबसे अधिक बल जो मिलता है वह यह है कि हमारी आत्मा निर्मल हो जाती है ! भीतर में शांति और आनन्द का अनुभव होता है, विश्वास बढ़ता है ! हमारा चित्त जितना निर्मल होता जायेगा, पुराने संस्कार घुलते चले जायेंगे और नए संस्कार आप बनने नहीं देंगे !

****

हमें अपना सर्वस्व भगवान के हाथों में, भगवान के चरणों में समर्पण कर देना चाहिये ! उस महान कलाकार को हमें अपनी मूरत गढ़ने का अवसर देना चाहिये ! " हे प्रभु ! तेरी इच्छा पूर्ण हो !" प्रभो ! जैसी मूर्ति आप बनाना चाहते हैं, बना लीजिये, स्वीकार है !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

इन्द्रियों को वश में लाना होगा, मन के संकल्प-विकल्पों से मुक्त होना होगा ! ये मन के विकार ख़त्म नहीं हो सकते, जब तक कि आपके विचार शुद्ध नहीं होते, आपकी वाणी शुद्ध नहीं होती, आपका व्यवहार शुद्ध नहीं होता ! आप एक तरफ तो लड़ाई-झगड़ा करें, और फिर संध्या में बैठें और ये चाहें कि आपका मन एकाग्र हो जाये - यह कैसे हो सकता है ? लड़ाई-झगड़ा करें, बुराई करें, पाप करें और संध्या के समय मन स्थिर हो जाये - यह कैसे सम्भव है ? वास्तव में शांति तभी मिलेगी जब हमारी बुद्धि स्थितप्रज्ञ अवस्था को प्राप्त करेगी, ज्ञान अवस्था में पहुँचेगी, अनुभव की अवस्था में आत्मा के नज़दीक पहुँचेगी !

****

अपनी जीवन- दिनचर्या को ही एक साधना बना दें ! केवल 5-10 मिनिट सुबह-शाम बैठना काफ़ी नहीं है ! उससे थोड़ी शक्ति अवश्य मिलती है, आत्मा बलवान होती है, परन्तु साधना पूरी नहीं होती ! सारा दिन हम अपने भीतर में,आँखों द्वारा, कानों द्वारा, वाणी द्वारा तथा मन के संकल्प-विकल्पों द्वारा जो कूड़ा- करकट डालते रहते हैं, उसे रोकना होगा, सजग रहकर, सावधान होकर ! पुराने संस्कारों का जो भण्डार है उसे गुरुकृपा और धर्मशास्त्र के सहारे समाप्त करना होगा तथा वर्तमान में सावधान रहना होगा कि चित्त पर नए संस्कारों की और छाया न पड़े ! कर्म और कर्मफल के साथ आसक्ति न हो ! परमात्मा पर भरोसा रखें ! धीरे-धीरे पुराने संस्कार घुलते जायेंगे, नए संस्कार आप बनने नहीं देंगे,भीतर में चित्त निर्मल होता चला जायेगा, ईश्वर प्रेम आता जायेगा ! असीम शान्ति और सच्चा सुख आपको भीतर में अनुभव होगा ! एक दिन ऐसा आयेगा कि आप गंगाजल की तरह बिलकुल निर्मल बन जायेंगे ! यही असली स्थान है आनन्द का, शान्ति का !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

जो ऊँचे अभ्यासी हैं वे जो भी साधना करते हैं उसके साथ-साथ 'मौन' की साधना को भी बढ़ाते जाते हैं ! मौन का मतलब यह नहीं कि हमने तो मौन रखा है, बोलते नहीं, पर कलम-दवात लिया और कागज़ पर लिख दिया, भीतर में संकल्प-विकल्प उठ रहे हैं ! मौन का मतलब है - निर्विचार, कोई संकल्प-विकल्प नहीं, कुछ भी नहीं, भला-बुरा कोई विचार नहीं ! यह कब होता है ? यह तब होता है जब साधक अपने आपको ईश्वर के चरणों में समर्पित कर देता है ! अपनी कोई इच्छा नहीं रखता, कोई आशा नहीं रखता !

कोई आशा मत रखिये, कोई इच्छा मत रखिये ! इच्छा रखेंगे और यदि इच्छा की पूर्ती नहीं होती तो मन दुःख मनायेगा ! प्रत्येक व्यक्ति यही चाहता है, उसकी यही इच्छा होती है कि संसार के जितने सुख हैं सब मेरे पास आ जायें और सारा संसार मेरे अनुकूल चले ! यह सोचना मूर्खता है !

****

उदासीनता अपनानी चाहिए ! अपना कर्तव्य करते रहना चाहिए शास्त्र के अनुकूल, भीतर की चेतना के अनुकूल और गुरु के उपदेश के अनुकूल ! क्या परिणाम होगा इसकी चिन्ता न करें ! आप संसार की सेवा करें ! व्यवहार से, मधुर वाणी द्वारा ! उदासीन वह नहीं जो संतों के कपडे पहन लेता है ! उदासीन वह है जो मन से, संसार से, उदासीन हो जाता है ! यह संसार स्थायी नहीं है ! इसे कहते हैं अनित्यता का बोध, यानी कोई वस्तु नित्य नहीं है सिवाय परमात्मा के ! न यह शरीर रहने वाला है, न सम्बन्धी रहने वाले हैं, न धन रहने वाला है ! न सुख रहना है, न दुःख रहना है ! सब अनित्य हैं ! अनित्यता का बोध हो जाता है, ज्ञान हो जाता है ! भीतर में समझ आ जानी चाहिए कि यह संसार तो नित्य रहने वाला नहीं है तो फिर इसके प्रति मोहग्रस्त क्यों होना चाहिए ! आसक्ति क्यों रखें, संसार से मन हटाकर ईश्वर से अनुराग किया जाये ! दुनियाँ से उदासीनता के साथ-साथ ईश्वर से अनुराग होना चाहिए !

----- गुरु वाणी ----

(ब्रह्मलीन महात्मा डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

गुरु कभी रूठता नहीं है, यह तो उसकी एक अदा होती है, एक 'नखरा' होता है ! संतों का, सूफ़ियों का रास्ता उत्कट प्रेम का है ! कैसे होता है ऐसा प्रेम ? हे सिखलाया नहीं जा सकता ! ब्रह्मविद्या का दान गुरु द्वारा अनायास हो जाता है ! कोई कुछ करता नहीं है, क्योंकि ये विद्या मन की नहीं है, आत्मा की है ! गुरु चाहे भी मन से तो कर नहीं पायेगा ! आत्मिक विद्या मन के द्वारा नहीं होती ! ये तो कोई प्रेम का ऐसा दुर्लभ क्षण आता है जब शिष्य अपने को खो देता है और गुरु भी अपने आप में नहीं रहते हैं - दोनों मिलकर एक हो जाते हैं ! यह आत्मिक लीला वर्णन नहीं की जा सकती ! उसका कोई साधन, कोई नियम, कोई तरीक़ा नहीं बताया जा सकता ! वो कौन सा क्षण, पवित्र क्षण, होगा जब चातक को स्वांति बूँद मिलेगी - सो कोई नहीं कह सकता ! महादानी गुरु और सुपात्र शिष्य जो ऐसी अनुपम प्रेम लीला करते हैं, वे भले ही अपने अति आनन्द विभोर और मदहोशी जैसे आलम में व्यवहार से भले ही पहचान लिए जायें, पर उस दशा का शब्दों में वर्णन करना अति कठिन है ! (राम सन्देश - मई-जून, **1999.**)

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

गुरु महाराज **(**महात्मा डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी**)** ने एक प्रवचन में बताया है कि गुरु-भक्ति कैसे की जाय **!** गुरु से प्रेम करने से तथा गुरु की भक्ति करने से भी आत्मा का साक्षात्कार हो सकता है, परमात्मा के दर्शन हो सकते हैं **!** पहले गुरु के शरीर की सेवा करते हैं **!** यह श्री गणेश है **!** जिस किसी को गुरु की शारीरिक सेवा करने का अवसर नहीं मिला, उसमें सरलता नहीं आयेगी **!** गुरुजन अपनी सेवा नहीं कराते, शरीर की सेवा बहुत कम कराते हैं **!** यदि गुरु की सेवा का अवसर न मिले तो भाइयों की सेवा करो, यह भी गुरु सेवा है **!** इसके बाद गुरु के, ईश्वर के गुणों को सराहते हैं **!** हम जितना उसके स्वरुप को, उसके गुणों को सराहेंगे, उतना ही हममें निखार आता चला जायेगा **!** राम दास जी ने भी लिखा है कि अपने इष्टदेव की चर्चा करते रहिये **!** हर वक्त उनका ध्यान करिये, हर वक्त उनके गुणों को सराहिये **!** गुरु के, ईश्वर के, गुणों को सराहो **!** इसी को कीर्तन कहते हैं **!** प्रभु की कीर्ति करो, उपमा करो **!** यह जो नौ प्रकार की भक्ति **(**नवधा भक्ति **)** है वह भी इसी में आ जाती है **!** भक्ति में अर्चना करते हैं **!** जल, चावल, पुष्प चढ़ाते हैं **!** भिन्न-भिन्न तरीक़े से अपने इष्टदेव के साथ प्रेम का व्यवहार करते हैं, वो भी हमारी साधना को सफलता की ओर ले जाते हैं **!** पहले शरीर की सेवा की, फिर गुरु के मन की सेवा की, यानी उसके गुणों को सराहा, फिर गुरु की ज्ञान की, विज्ञानं की स्थिति है, उसका अनुसरण करना चाहिए **!** वे जैसा आदेश दें, श्रद्धा और विश्वास के साथ, उसको सही मानें, उस पर मनन करें तथा उसको अपने जीवन में उतारने की कोशिश करें **!** थोड़े शब्दों में, गुरु के जो गुण हैं उन्हें हम सराहें और उनकी स्मृति करते हुए उन्हें अपने जीवन में उतारें **!** समर्पण इससे आगे चलकर होता, इससे पहले नहीं होता **!** इसके लिए तैयारी करनी पड़ती है **!** तब हमारी आत्मा गुरु या ईश्वर में लय होती है **! (**संत प्रसादी**-12)**

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

चित्त, बुद्धि एवं विचार निर्मल होने चाहिए **!** मन में बुरी भावना न हो **!** चित्त में नये, नये संस्कार न बनें **!** बुद्धि तर्कशील न रहे **!** जब तीनों से हम मुक्त हो जाते हैं तब जाकर पवित्रता पाते हैं **!** हमारी भावना ऐसी होनी चाहिए कि सबमें ईश्वर के दर्शन करें **!** जब सबमें ईश्वर के दर्शन करेंगे तो भीतर की बुराइयाँ तनिक से प्रयास से स्वतः ही ख़त्म होती चली जायेंगी **!** स्मृति का, सुमिरन का, असली परिणाम यही है कि जिसके स्वरुप और गुण हम स्मरण करें वह हमारे भीतर में प्रकट होकर रोम-रोम को रोमांचित कर दे, हमारा सारा शरीर ईश्वर मय हो जाये **!**

--- ----------

जितना बन सके उतना सत पर चलना चहिये **!** यद्यपि यह बहुत कठिन है, किन्तु कोशिश करनी चहिये कि सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य आदि का पालन हो **!** हमारा शरीर स्वस्थ हो, मन स्वस्थ हो **!** स्वस्थ का मतलब है कि हम कुविचारों से ऊपर उठें, संस्कार न बनने पायें **!** बुद्धि स्वस्थ हो अर्थात वह प्रेरणा आत्मा या सद्गुरु से ले **!** मन बुद्धि के आधीन हो, शरीर व इन्द्रियाँ मन के आधीन हों, सबमें एक प्रकार का संगीत हो, समन्वयता या सद्भाव **(harmony)** हो **!** फिर देखिये कि आपको शांति मिलती है या नहीं **!** हम सबमें अपना स्वरुप, आत्मस्वरूप या ईश्वरस्वरूप देखें **!** यह अप्रयास हो **!** भीतर में ऐसी जो भी परिस्थिति बने वह बिना प्रयास के हो **!** इसी को सहजावस्था कहते हैं **!** कोशिश न करनी पड़े **!** ईश्वरीय गुण स्वतः ही हमारे व्यवहार में प्रकट हों **!** किसी प्रकार की आसक्ति न हो, मोह न हो **!** चित्त पर तनिक सी भी मलीनता न हो, कहीं लगाव न हो **!** तनिक भी अन्तर न हो, अन्तर होगा तो अशुद्धि होगी **!** फिर जन्म-मरण के चक्कर में फँस जाओगे **!** जेसे गुरु हैं अथवा ईश्वर हैं, वैसा ही बन जाना है **!** जब तक हम लोग ऐसे नहीं बन पाते, तब तक हमारी साधना अपूर्ण है **!**

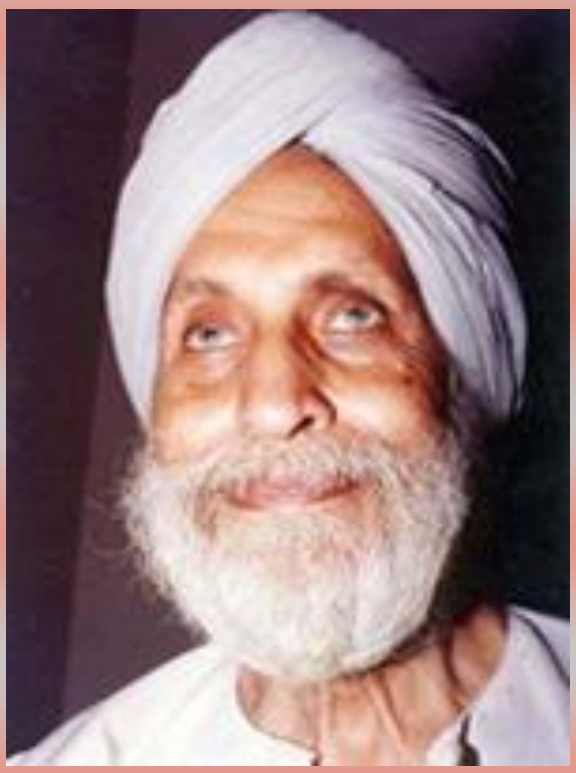

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

जब तक आपके भीतर में 'मैं' यानी अहंकार रहेगा तब तक आप ईश्वर से दूर रहेंगे **!** साधना यही है, बिना इस शैतान को ख़त्म किये, बिना भीतर की माया को, अहंकार को ख़त्म किये हुए, प्रभु की समीपता प्राप्त नहीं हो सकती **!** हम सब अहंकार के प्रतीक हैं, 'मैं' 'मेरापन' इस 'मैं' को ख़त्म करना है **!** वास्तविक बलिदान अपने 'अहंकार' का है **!** यह अहंकार हमें अपने प्रीतम से, परमपिता परमात्मा से दूर करता है **!** 'मैं' का अहंकार जब तक पूर्ण रूप से नहीं निकलेगा तब तक इष्ट की सच्ची अनुभूति सम्भव नहीं है **!** सब छोड़कर मात्र खुदी की निःशेष करने की साधना हो तथा जो भी भाव, विचार अथवा परिस्थिति उतपन्न हो, सबको उसके चरणों में न्योछावर कर दें **!** ईश्वर की प्रसन्नता तभी मिलेगी जब हम अपने अहंकार को ख़त्म कर दें **!**

परमात्मा प्रेम स्वरुप हैं - अप्रयास सबसे प्रेम करो **!** प्रेम में सेवा भी आ जाती है, सहायता भी आ जाती है और बलिदान भी आ जाता है **!** परमात्मा का जो स्वरुप है या आपका जो वास्तविक स्वरुप है, वह प्रेम ही है **!** ज्ञानी और भक्त दोनों का स्वरुप प्रेम है **!** जब आपके विचार, मन, बुद्धि और व्यवहार में प्रेम अपने आपसे विकसित हो जायेगा तब मनुष्य सहज रूप में प्रेम-रूप बन जायेगा **!**

हम सब अहंकार के प्रतीक हैं **!** 'मैं', 'मेरापन', इस 'मैं' को ख़त्म करना है **!** वास्तविक बलिदान जो है वो है अपने अहँकार का- 'मैं' और 'मेरापन' **!** हमारा यह अहँकार हमें अपने प्रीतम से परम पिता परमात्मा से दूर करता है **!**

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

जब तक इस संसार तथा यहाँ की चीज़ों के प्रति हमारी आसक्ति है, तब तक हमारा उद्धार सम्भव नहीं है ! संतमत के आचार्य इतने दयालु हैं कि त्याग पर बल नहीं देते ! वे कहते हैं कि दुनियाँ भोगो, लेकिन धर्मानुसार, और अनुभव करो कि कहाँ सच्चा और शाशत्व सुख है ! दुनियाँ की नाशवानता पर गौर करते चलो और दुनियावी भोगों के आकर्षण से उपराम होते चलो !

इस रास्ते का सबसे बड़ा रहस्य यह है कि गुरुजन आपको इतना प्रेम देते हैं कि आप उनके प्रेम में मस्त होकर, बहुत सी बुराइयाँ, बहुत सी बातें जो गुरुदेव के आदेशों-उपदेशों के अनुसार उचित नहीं होतीं, स्वयं छोड़ देते हैं ! गुरुजनों के निस्वार्थ और ईश्वरीय प्रेम के आकर्षण का क्या कहना ? इस आकर्षण में हम सब अकारण ही खिंचते चले जाते हैं और उनके प्रेम में हम स्वतः शुद्ध होने लगते हैं ! उनके सानिध्य में बुराइयों को छोड़ने में अधिक कठिनाई नहीं होती ! हंसी-ख़ुशी, लगन के साथ, हम बुराइयों से मुक्त होते जाते हैं और हमारी आसक्ति भी समाप्त होती जाती है !

गुरु वाणी

(ब्रह्मलीन परम संत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

जीवन का लक्ष्य है - निर्मल होना ! गंगनीर की तरह निर्मल होना, पवित्र होना ! माया के कितने ही थपेड़े लगें, उत्तेजना मिले, प्रतिकूल-अनुकूल परिस्थितियाँ आयें, परन्तु हमारा चित्त अडोल और नर्मल रहे ! हमारे जीवन में रस रहे, आनन्द रहे ! हमारे व्यवहार से सबको सुख पहुँचे ! जीवन में गंगनीर की तरह निरन्तर प्रवाह रहे ! अतीत के लिए कोई खेद नहीं, भविष्य की कोई चिन्ता नहीं ! प्रभु के, भगवान शिव के, एकरस समता-स्वरुप का सुख जीव माँगता रहे ! उसी सुख, शांति में निरन्तर रहे ! जो हमारे भीतर होगा, वही बाहर निकलेगा ! हमें संसार के सब पदार्थ उपलब्ध हैं, परन्तु हमारे भीतर में आनन्द नहीं है, शान्ति नहीं है क्योंकि हममें गंगाजल जैसी पवित्रता नहीं है ! हमारे भीतर में दाग हैं, हमारे संस्कार हैं, वृत्तियाँ हैं, इच्छायें हैं ! जब हमारी इच्छाओं की पूर्ती नहीं होती तो हमें निराशा होती है ! निराशा ही सब दुखों का बीज है ! इससे ही क्रोध आता है, ईर्ष्या उत्पन्न होती है ! इसी के कारण सब लड़ाई-झगडे होते हैं ! हमारा चित्त हमेशा क्षुब्ध, असन्तुष्ट, अतृप्त, अशान्त रहता है ! यह दाग कैसे मिटें, चित्त कैसे निर्मल हो ?

जहाँ-जहाँ यह मन फँसा हुआ है, हमारा चित्त फँसा हुआ है, वहाँ से इस मन को मुक्त कराना है और प्रभु के चरणों में लगाना है ! यह कहने से ही नहीं लग जायेगा ! इसके लिए हमें सद्गुणों को अपनाना होगा ! बिना सद्गुणों को अपनाये हमारी मुक्ति नहीं हो सकती ! हमारे यहाँ कन्या की, स्त्री-शक्ति की पूजा होती है क्योंकि उनमें सदगुण हैं, प्रेम, करुणा, दया, कोमलता, सहनशीलता, सेवा के सदगुण हैं ! यही भक्ति के साधन हैं ! प्रभु के चरणों में अनुराग हो परन्तु आशा-अपेक्षा कुछ न हो ! केवल एक ही आशा हो कि किसी प्रकार से हमारा प्रियतम-परमात्मा प्रसन्न हों ! हम जब तक इन सद्गुणों को नहीं अपनायेंगे हमारे चित्त के दाग, हमारी चित्त की मलीनता, अवगुण व संस्कार, कभी नहीं मिट सकते !

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

जो दीन होते हैं, जो संत होते हैं, जो भक्त होते हैं, उनका हृदय बड़ा कोमल होता है ! वे प्रार्थना करते हैं - हे प्रभु ! हमें अपने चरणों में ले लो ! हमारे पास न तो बुद्धि का बल है, न बाहुबल है, न चतुराई है, न धन का और न राजनीति का बल है ! हमारे पास कोई बल नहीं है, हम तो निर्बल हैं - यही दीनता है ! इन्सान के पास सब कुछ होते हुए भी यदि वह निर्बल बना रहता है, यानी अपने किसी भी बल पर भरोसा नहीं करता, सिवाय एक ईश्वर के किसी पर भरोसा नहीं करता, वही सबसे बड़ा बलबान है ! जो इस प्रकार निर्बल होकर भगवान के चरणों में रोते हैं, गिड़गिड़ाते हैं, प्रार्थना करते हैं - भगवान उन्हीं की सुनता है ! यही उसका विरद है ! यह एक सरल साधन है ! यदि हम अपने चित्त को निर्मल करना चाहते हैं तो मानसिक तौर पर भगवान के चरणों में बैठकर रोयें, उसको पुकारें कि- हे भगवान ! हम इस भवसागर में डूब रहे हैं, हमें अपना दामन पकड़ा दीजिये ! दीन हृदय से निकली प्रार्थना पर भगवान दौड़े चले आते हैं !

----- गुरु वाणी -----

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

दीक्षा लेने का मतलब यह है कि आत्म साक्षात्कार करने के लिए या अपने आपको जानने के लिए, समर्थ गुरु से या शास्त्रों में बताये सिद्धान्तों से मार्गदर्शन लेना चाहिए ! दीक्षा में दीक्षा लेने वाला शिष्य अपना सर्वस्व गुरु को अर्पण करता है ! शाब्दिक रूप में तो हम सब कह देते हैं कि मैं तन,मन, धन अपना सब आपको **(**गुरु को**)** अर्पण करता हूँ, परन्तु यह अर्पण होता नहीं है ! गुरु भी बता देता है कि किस प्रकार साधन शुरू करना चाहिए ! परन्तु यह वास्तविक दीक्षा नहीं है, यह तो रास्ता बताने का 'श्री-गणेश' है !

दीक्षा में तो साधक अपना सब कुछ न्योछावर कर देता है ! भीतर से ख़ाली हो जाता है और गुरु के पास जो कुछ है वह उस पात्र में डाल देते हैं ! वो पात्र उस 'देन' को कितना सम्भाल सकता है, वो उस शिष्य की क्षमता और श्रम पर निर्भर करता है ! गुरु तो यही प्रयास और कृपा करता है कि उसके पास जो कुछ भी है, सब उस शिष्य को दे दें ! इसीलिए उस 'आत्मिक-कृपा' को संत-मत में 'गुरु-प्रसादी' कहते हैं ! प्रसाद यानी उसकी कृपा, प्रसन्नता, शान्ति, उल्लास, आनन्द, यानि सब कुछ जो आत्मा के गुण हैं वो शिष्य के ख़ाली बर्तन में डाल देता है ! इस अमूल्य आध्यात्मिक निधि को अपने बर्तन में सम्भाल कर रखने के नाम अभ्यास है ! **(** राम सन्देश : मई-जून, **1999)**

-

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

परमार्थ के पथ पर कभी संतुष्ट नहीं होना चाहिए, कभी थकावट नहीं आना चाहिए ! दुनियाँ के पथ पर थकावट आ जानी चाहिए ! पचास साल की उम्र हो गयी, अब बानप्रस्थ ले लीजिए ! पचहत्तर साल की उम्र हो गयी, अब सन्यास ले लीजिये ! सन्यास का मतलब है कि जहाँ-जहाँ पर आपका मन फंसता है, वहाँ-वहाँ से उसे स्वतंत्र करके ईश्वर के चरणों में लगाइये ! पूर्ण त्याग हो, अपने शरीर से तथा अन्य सभी चीज़ों से ! किसी वस्तु की, कोई चाह न हो, किसी मनुष्य पर कोई आसक्ति न हो ! यानी अपना जितना मोह है, अज्ञान है, उसे ईश्वर प्रेम की अग्नि में जलाकर राख कर देना चाहिए !

ईश्वर सर्वज्ञ है, सर्वव्यापक है, वह हमारी सारी चाल-ढाल को देखता है, हमारे व्यवहार को देखता है, चूँकि हमारे भीतर में ईश्वर के, या गुरु के, प्रति श्रद्धा नहीं है, हम बुरे कर्म कर बैठते हैं ! ऐसा क्यूँ होता है ! ऐसा इसलिए होता है कि हमारे भीतर में विश्वास ही नहीं है कि ईश्वर हमें देख रहा है ! अपने सच्चे पिता पर भरोसा रखो और उसकी याद में रहो ! प्रयास करना हमारा काम है, परिणाम ईश्वर के हाथ में है ! परन्तु यह बात सत्य है कि जैसा हमारा प्रयास होगा, प्रभु उसका शुभ फल अवश्य देते हैं ! सदाचार, सदव्यवहार, सदविचार तथा ईश्वर के गुणों का स्मरण, इतना भी यदि हम कर लें, तो ईश्वर की अति-कृपा अवश्य प्राप्त होती है !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

परिवार में एक-दूसरे से सहयोग होना चाहिये ! जो व्यक्ति परिवार में सफल हो जाता है, वह संसार में भी सफल हो जाता है और परमार्थ के पथ पर भी सफल हो जाता है ! हम प्रतिक्षण प्रतिक्रिया करते रहते हैं, कोई गंभीर अभ्यास, मनन-चिन्तन नहीं होता, यद्यपि सारा दिन हम विचार उठाते रहते हैं ! हमारा प्रत्येक विचार प्रतिक्रिया का रूप है, और जब तक प्रतिक्रिया होती रहेगी, मन स्थिर कैसे होगा ? मन और बुद्धि का आवरण हटाने के लिए सबसे पहले प्रतिक्रिया न करने की आदत डालें ! प्रायः मौन रहने का अभ्यास करें ! जब तक बुद्धि की सम-अवस्था नहीं आएगी, भीतर में आनन्द नहीं आ सकता ! पहले मन की, बुद्धि की चंचलता ख़त्म करो, इन्हें सम-अवस्था में लाओ ! दुःख-सुख जो कुछ भी आये, उसमें सम रहो ! सम बुद्धि को आत्मा में लय कर दो !

प्रयास एवं परिश्रम करने के बाद भी यदि कुछ प्राप्त नहीं होता है तो ईश्वर की इच्छा में, उसकी गति में, अपनी गति को मिला देना है ! जो व्यक्ति ऐसा नहीं करता वह कभी प्रसन्नचित्त नहीं रह सकता ! इसका अभ्यास करना चाहिए कि प्रभु जो करते हैं, हमारे हित में करते हैं ! प्रसन्नता का बोध करने के लिए यह आवश्यक है कि संतोषवृत्ति हो ! हर साधक का कर्तव्य है कि वह अपने जीवन के लक्ष्य के प्रति जागे और इस लक्ष्य प्राप्ति में जो भी साधन अनुकरणीय हों उन्हें पूरा करने में पूरी निष्ठां के साथ, तन, मन, वचन से जुट जाये ! भगवान का दर्शन यह है कि मेरे और मेरे प्रियतम में कोई फ़र्क़ न रहे ! दर्शन का मतलब है कि भगवन के चरणों में जायें तो उनकी चरणरज बन जायें, उन्हीं का रूप बन जायें ! हमारे यहाँ की प्रमुख साधना है कि हम अपने आपको जानें, स्वनिरीक्षण करें !

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

पूजा में बैठने से पहले अपनी इच्छा शक्ति को नियंत्रण में करें ! परमार्थ में लाभ प्राप्त करने के लिए जितनी आपकी शक्ति लग सकती है उसका उपयोग तो करें ही, साथ ही साथ ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि - 'हे भगवान ! मुझे शक्ति दें !' यदि प्रयास करने पर भी कोई कमज़ोरी आपसे नहीं छूटती, तो उसे अपने गुरुदेव से अवश्य कहना चाहिए ! वे आपकी सेवा करेंगे, आपके लिए ईश्वर से दुआ करेंगे ! उससे आपको बल मिलेगा ! हमें अपने गुरुजन से अपनी स्थिति का सच्चा हाल अवश्य कहना चाहिए !

****

साधना में जिस वक्त हम बैठें उस समय अपने इष्टदेव या परमात्मा के जिस रूप को हम मानते हैं, उसका खूब गुणगान करें ! जितनी उसकी स्तुति कर सकते हैं, करें ! शुरू में सगुण रूप का ध्यान करते हैं ! वही सगुण रूप आगे चलकर निर्गुण हो जाता है ! उनके उस स्वरुप को, उनके गुणों को, आँखों द्वारा अपने हृदय में उतारना चाहिए ! भक्ति और ज्ञान के दोनों माध्यम, भजन- कीर्तन और मौन आन्तरिक साधन, इन दोनों को अपनाना चाहिए ! जो पुराने अभ्यासी हैं, जिनको मौन में शांति मिलती है, उनके लिए थोड़ी सी प्रार्थना और उपासना काफी है ! परन्तु नए भाइयों को भजन, प्रार्थना करनी चाहिए और जैसे वे बनना चाहते हैं वैसी भावना धारण करनी चाहिए ! आवश्यकता दोनों की है ! केवल मौन साधना करें या केवल भजन उपासना करें - ऐसा करना भूल है !

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

---- ----------

पूजा से पहले स्तुति गाते हैं, भजन आदि के द्वारा प्रार्थना करते हैं, परमात्मा के गुणों को याद करते है, सराहते हैं ! इससे वातावरण बनता है ! परमात्मा की नज़दीकी प्राप्त कर ली, अब उसकी प्रार्थना करें, जो माँगना है मांगें, फिर उसकी प्रसादी लेने के लिए अपने आपको उसके चरणों में समर्पण कर दें ! उसकी कृपा की गंगा में स्नान करें, डुबकी लगायें ! यदि आप अपने मन को दृढ करना चाहते हैं तो थोड़ा-थोड़ा अभ्यास भी करें आज्ञा चक्र पर या जैसा आपको आपके गुरुजनों ने बताया हो ! फिर प्रसाद अर्पण करें और स्वयं भी प्राप्त करें !

****

पूजा में विचार इसलिए आते हैं क्योंकि हमारा मन मलीन है ! हमारी परमात्मा के प्रति श्रद्धा में कमी है ! हमारे हृदय में ईश्वर के प्रति भाव की गहराई है ही नहीं, और ईश्वर के प्रति भय भी नहीं है ! भय उससे होता है जिसके प्रति हमारे मन में सम्मान होता है, प्रेम होता है ! अतः जब भी आपका मन इधर-उधर भागे तब आँखें खोलकर कुछ पढ़ना या भजन गाना शुरू कर दीजिए ! थोड़ी देर बाद आँखें बंद करके मौन साधना करिये, आन्तरिक साधन करिये ! अगर तब भी मन नहीं ठहरता तो आँखें खोलकर या बंद करके ईश्वर के चरणों में बैठकर खूब रोइये और विनती करिये की हे प्रभु ! मेरी यह कैसी दयनीय दशा है, मैं कैसे आपको अपना मुँह दिखाऊँ ? विरह की वेदना और व्याकुलता के बाद मन में स्थिरता आती है ! मन तब आत्मिक साधन करने के लिए तैयार हो जाता है !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

प्रभु करुणासागर हैं, दयानिधि हैं, सबका पालन-पोषण करते हैं ! हम प्रभु की उपासना करते हैं किन्तु उनके गुणों को नहीं अपनाते ! यह कैसी पूजा है ? यह कैसी साधना है ? हम जड़ समाधि पर अधिक जोर देते हैं कि मन स्थिर हो जाये ! केवल इतने से कुछ नहीं होगा ! यह देखिये कि प्रभु के गुण हमारे में विकसित हो रहे हैं या नहीं ? हमारे व्यवहार में विकसित हो रहे हैं या नहीं ? हमारी जिव्हा में, वाणी में, मधुरता आ रही है या नहीं ? क्या हमारी वाणी, हमारे शब्दों, के कारण दूसरों को दुःख पहुँचता है ? यदि पहुँचता है तो हम प्रभु से कोसों दूर हैं ! प्रभु तो मधुरता के सागर हैं !

लोग बाग़ पूँछते हैं कि साधना कैसे करना है ? साधना यही है कि हमें अपने जीवन को ही साधना का रूप देना है ! केवल आँखें बन्द करके बैठना ही साधना नहीं है ! साधना का अन्तिम रूप कैसा होता है इसको स्वामी रामदास जी इस प्रकार समझाते हैं कि जैसे अगरबत्ती या मोमबत्ती होती है, जो स्वयं जलती है और संसार को सुगन्धि और प्रकाश देती है ! इसी प्रकार से साधना का अन्तिम लक्ष्य अच्छा व्यवहार करते हुए अपने आपको ख़त्म कर देना है ! जीवन रूपी साधना करते हुए यह हमारा सहज स्वभाव यानी सहज स्थिति बन जानी चाहिए ! समाधि भी एक वृत्ति है ! हम रोज़ प्रगाढ़ निद्रा में सोते हैं ! क्या वह समाधि नहीं है ? क्या उस समाधि से हमारे में कोई परिवर्तन आ जाता है ? सिवाय इसके कि शरीर कुछ हल्का हो जाता है ! डाक्टरी उसूल से सोना उचित है परन्तु उससे भगवान तो नहीं मिलते ! चेतन समाधि, गुणों से पूरित समाधि, प्रेम से पूर्ण समाधि, ज्ञान समाधि - इनसे ईश्वर मिलता है ! (संत प्रसादी-12)

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

प्रार्थना करने, मनन करने, आचार-व्यवहार शुद्ध करने और सदगुणों को अपनाने तथा सदव्यवहार करने के बिना रास्ता नहीं मिलेगा, साधना नहीं हो सकती ! अपने मन पर अंकुश लगाना चाहिए ! मन, शरीर और इन्द्रियों पर अंकुश रखें ! बुद्धि मन को वश में रखे और बुद्धि स्वयं आत्मा और गुरु से प्राप्त हुई ज्ञान-प्रसादी से, उनकी आत्मिक ज्योति से, प्रकाशित होवे ! अगर हम इन बातों को याद रखेंगे तो थोड़े ही दिनों में प्रगति होने लगेगी ! आप स्वयं अनुभव करेंगे, आपके मित्र एवं परिवारीजन भी खुश होकर अनुभव करेंगे कि आपमें कोई विशेष परिवर्तन आ गया है ! आपके स्वभाव में शांति होगी, प्रेम होगा, करुणा होगी, यहाँ तक कि आप जहाँ बैठेंगे, आपके पास जी बैठेगा, उसे भी शान्ति का अनुभव होगा ! आप एक सुगन्धित पुष्प की तरह बन जायेंगे !

मनुष्य के भीतर में अतीत का इतिहास लिखा है और मन स्वभाव-वश उसके प्रति संकल्प-विकल्प उठाकर दुखी होता है ! ईश्वर ने हम पर कृपा करी और रात बनाई और नींद का उपहार दिया ! परन्तु मनुष्य नींद में भी स्वप्न देखता है ! इसे सोना चाहिए, यह सोता नहीं - अर्थात मन से सोयें, मन को विश्राम दें,आनन्द के टिकाव के लिए ! इस हेतु अभ्यास भी यही है कि हम संसार, जो कि भीतर में भी है और बाहर भी है, से सो जायें, यानी विमुक्त हो जायें, और ईश्वर के प्रति निरन्तर जागरूक रहें ! चित्त की जो वृत्ति है, उससे जब तक हम मुक्त नहीं होते, शून्य नहीं होते, तब तक हम अपने जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकते !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

गुरु नानक जी कहते हैं कि बिना सद्गुणों को अपनाये हुए सच्ची भक्ति नहीं हो सकती, भक्ति में सफलता नहीं मिल सकती **!** भक्ति तो हम सब लोग करते हैं परन्तु हमारी भक्ति सफल क्यों नहीं हो रही है **?** उच्च कोटि के संत कृष्ण मूर्ति जी ईश्वर को नहीं मानते थे, वे कहते थे कि इस रास्ते में नैतिक व्यवहार, सदव्यवहार **(moral character)** की अति-आवश्यकता है **!** इसीलिए हमारे यहाँ यम-नियम का पालन कराते हैं **!** और कुछ नहीं कर सकते तो चौबीसों घंटे अपने मन को देखते रहो कि इसमें किसी के प्रति घृणा की, ईर्ष्या की, भावना तो नहीं है, किसी को दुःख पहुंचाने की इच्छा तो नहीं है **!** यदि हमें ईश्वर बनना है, आत्मस्वरूप बनना, आत्मा का साक्षात्कार करना है, ईश्वर के दर्शन करने हैं तो हमें उन गुणों को जो शास्त्रों में लिखे हैं या महापुरुषों ने बताये हैं, अपनाने का प्रयास करना चाहिए **!**

अपने जीवन को यज्ञ का, बलिदान का, रूप दें, सब को सुख पहुंचाने का प्रयास करें **-** ईश्वर मिल जायेंगे **!** जो समाधि, जो साधना, जो अभ्यास, जो एकाग्रता या स्थिरता जिसके परिणामस्वरूप हमारे भीतर में ईश्वर के गुण विकसित नहीं होते, उस पर विश्वास नहीं करना चाहिए **!** हममें ईश्वर के गुण विकसित होने ही चाहिए **!** आप सबका लक्ष्य संत बनना है **!** संत ही सतस्वरुप का नाम है **!**

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

भक्ति मुख्यतः नौ प्रकार की होती है, परन्तु इसका और विस्तार किया गया है **!** उस विस्तार में हमें नहीं पड़ना है **!** ईश्वर-कृपा से हमें यदि किसी महापुरुष का संग मिल जाता है और वे महापुरुष हमें अपना लेते हैं, तो यदि हम उनकी सेवा करें, उनके साथ प्रेम करें, जैसा कि भगवान कृष्ण ने गोपियों के साथ किया था उसी प्रकार का व्यवहार यदि हम करें, तो हमें सफलता आसानी से मिल सकती है **!** इससे सरल साधना और कोई नहीं है **!**

विचार में भी भगवान हैं, वाणी में भी भगवान है, आँखों में भी भगवान बसते हैं, कानों में भी उनकी मधुर बांसुरी की ध्वनि सुनाई देती है **!** बुद्धि में भगवान हैं, हृदय में भगवान हैं, रोम-रोम में भगवान हैं **!** ये कैसे डोलते हैं जैसे सूरदास जी ने बताया है **!** भगवान ऊँगली छोड़कर तनिक दूर होते हैं तो सूरदास जी क्या कहते हैं **-** कहाँ भागोगे **!** यह शारीरिक प्रेम नहीं, बहुत उच्च कोटि का प्रेम हैं **!** भगवान मैंने आपको अपने हृदय में बसा लिया हैं, हृदय से निकलकर कहाँ जाओगे **?** आप तो मेरे अंग-अंग में ही समाये हुए हैं **!** ऐसी प्रीति हैं जो तोड़े न टूटे, छोड़ी न छूटे **!** क्या हैं आपकी यह लीला **?** पर आप कहाँ जायेंगे **?** इस साधना के लिए नारद जी के भक्ति-सूत्र में जो मुख्य बातें बतलाई हैं, वे हैं **-** अपना सर्वस्व निछावर कर देना, अपनी कोई इच्छा और कोई आशा न रखना **!**

कोई व्यक्ति ऐसा नहीं हैं जिसके भीतर में कोई इच्छा न हो **!** कहने में तो बड़ा सरल लगता है परन्तु इच्छा **-**रहित बनना तो भगवान बुद्ध बनना हैं **!** आशा रहित होना हैं, अमर बनना हैं **!** " राज न चाहूँ, मुक्ति न चाहूँ, मन प्रीति चरण कमला रे **!** " मुझे राज नहीं चाहिए, संसार की वस्तुएँ नहीं चाहिए, हम सबसे उत्तम वस्तु मुक्ति भी नहीं माँगते **!** भगवान हमें इस धरती की रज चाहिए **!** मोह न हो, हमारा संसार की वस्तुओं के साथ प्रेम न हो, चिपकाव न हो **!** त्याग की भावना हो, भगवान के चरणों के साथ प्रेम हो **!** सिवाय प्रभु के चरणों के किसी अन्य के साथ लगाव नहीं **!** मेरा मुझमें कुछ नहीं हैं **-** यह शरीर तेरा, मन तेरा, धन तेरा, संतान तेरी, सब कुछ तेरा, यहाँ तक कि मेरा जो भाव हैं, आचरण, बुराई-भलाई, प्रभु ये सब तेरी ही हैं, मेरा अपना कुछ नहीं है **!** वह यह भी अभिमान नहीं करता कि मैं शुद्ध कर्म करता हूँ **!** कुछ नहीं, मैं केवल प्रभु के द्वार का कुत्ता बना रहूँ **!** वह धनी का द्वार नहीं छोड़ता **!** ऐसी भक्ति चाहता है कि यह द्वार न छूटे, उसे अभिमान नहीं हैं, सिर्फ़ मान हैं कि प्रभु मेरा हैं, मेरा वह पति हैं, मेरा वह पिता है, मेरा वह सर्वस्व हैं **! (**संत प्रसादी**-12)**

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

मन का स्वभाव है बेवजह सोचना और इसकी-उसकी करना ! परन्तु हमारा कर्त्तव्य है इसको ईश्वर के चरणों में लगाना ! मन की आदत है किसी के प्रति राग, किसी के प्रति द्वेष रखना ! परन्तु साधक को सिवाय ईश्वर के और कुछ नहीं सोचना है ! साधना में सावधान होकर, विचार मुक्त होकर, बैठना चाहिए ! साधना यही करनी है कि ईश्वर के ख़्याल में अपने मन को लगाना है ! 'मन तूज्योत स्वरुप है, अपना मूल पहचान !" अरे मनुष्य ! तू तो वही है, तेरा स्वरुप वही है, जो ईश्वर का है ! तू उसी परमात्मा का अंश है, उसी का बेटा है ! 'तत्व असि' ! वह परमात्मा सत, चित, आनन्द है ! हमें भी सत, चित, आनन्द की स्थिति में रहने का प्रयास करना चाहिए ! ज्ञान साधना में हम 'अहं ब्रह्मास्मि' की साधना करते हैं ! भक्ति साधना में हम 'तत्वमअसि' की साधना करते हैं ! ईश्वर के स्वरुप और गुणों का ध्यान करते हैं ! उसके गुणों को अपनाने का प्रयास करते हैं ! अन्य कोई ख़्याल नहीं, और सब भूल जाइये ! मन को सांसारिक बातों को सोचते हुए पता नहीं कितना वक्त हो गया ! प्रयास करते रहें ! धीरे-धीरे इसे समझ आ जाएगी और यह मन आत्मस्वरूप हो जायेगा ! इसका वही स्वरुप हो जायेगा जो ईश्वर का है ! कोई सांसारिक लोभ इसे प्रभावित नहीं कर सकेगा ! अपने आपको तीन गुणों से ऊपर उठाना है ! हमारे जीवन का लक्ष्य यही है - ईश्वर जैसा बनना ! इस सच्चाई को पहिचानना है कि तेरी ज्योति ईश्वर ज्योत का अंश है !

आपका मन सारी उम्र आत्मा से शक्ति लेकर विचार उठाता है और आपको 'सत-चित-आनन्द' की ओर नहीं जाने देता ! आपको इन्हीं विचारों पर काबू पाना है ! इस आत्मिक शक्ति का प्रयोग ईश्वरीय गुणों को अपनाने में लगाना है ! **(**संत प्रसादी-**12)**

--- गुरु वाणी ---

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

महापुरुष कहते हैं कि जितना विशाल सागर है, उससे भी ज़्यादा हमारे अवगुण हैं ! इनसे मुक्ति पाना सरल काम नहीं है ! एक-एक अवगुण को ले लें और उससे मुक्त होने के लिए सच्चाई के साथ प्रयास करें ! यदि मेरा झूँठ बोलने का स्वभाव है, तो मैं मान लूँ कि मैं झूँठ बोलता हूँ ! जो ब्यक्ति अपनी गलतियों को नहीं मानता वो साधना करने का अधिकारी नहीं है ! अपने साथ तो सत्य बोलो ! वास्तविक साधना यही है, क्योंकि जब तक गंगा-स्नान की निर्मलता नहीं आयेगी, चित्त पर जो युग-युगान्तर के संस्कार अंकित हैं उनसे मुक्त होने में सफलता नहीं मिलेगी, तब तक हमें वास्तविक सफलता नहीं मिलेगी ! बुराईयों से मुक्त हों, केवल एक ही लक्ष्य रखिये कि अपने आपको ब्रह्मज्ञानी बनायें !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

महापुरुषों का आशीर्वाद लेने के लिए हम उनके चरणों में बैठते हैं ! उनके पास बैठकर क्या करें ?

"हरिधन के भरि लेहु भण्डार!"

महापुरुषों के शरीर में से एक प्रकार की तरंगें (vibrations) रश्मियाँ निकलती हैं ! जैसे सूरज की किरणें निकलती हैं, इसी प्रकार से महापुरुषों के भीतर से आत्मिक रश्मियाँ आती हैं ! वे महापुरुष इसके लिए प्रयत्न नहीं करते, ऐसी उनकी सहज अवस्था हो जाती है ! सिद्ध पुरुष के पास बैठकर क्या मिलेगा ? हरिधन मिलेगा, ईश्वर का प्रेम मिलेगा ! हमारी मलिनता दूर होगी ! उनके चरणों में बैठकर हम भी आत्मा के करीब हो जायेंगे ! हमें भी ईश्वर का प्रेम कुछ-कुछ अनुभव होने लगेगा ! हम बार-बार उनके पास जाते रहें, ईश्वर के समीप बैठते रहें, तो जो उनका स्वरुप है, वही स्वरुप हमारा भी हो जायेगा ! जो उनके पास जाता है, संत मौन में ही उसे अपने जैसा बना देते हैं ! वहाँ जाकर कुछ माँगना नहीं चाहिए ! उनसे लेने की जो वस्तु है वह है 'हरिधन', ईश्वर प्रेम, प्रभु का प्रेम ! अपने अवगुणों को ख़त्म करने के लिए उनसे निवेदन करना चाहिए ! कृपा करना तो उनका सहज स्वभाव होता है !

" नानक गुर पूरे नमस्कार"

गुरुदेव भी ऐसे पूरे गुरु को नमस्कार करते हैं ! ऐसे पूरे गुरु से उनके जीवन काल में भी लोगों को लाभ होता है और उनके शरीर छोड़ने के बाद भी - यदि हम सच्चे हृदय से उनको याद करें ! संत मरता नहीं है ! वो ईश्वर की तरह हमेशा हमारे साथ रहता है ! आत्मा-परमात्मा का कभी नाश नहीं होता ! उनके जीवन काल में जितना लाभ मिलता है, उनके शरीर छोड़ने के बाद भी वह लाभ मिलता है ! पूज्य गुरु महाराज (परमसन्त डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी) ने हमें विश्वास दिलाया था कि जो इस समय हम कर रहे हैं, जो इस समय हमारी प्रकृति है, हमारे शरीर छोड़ने के बाद भी वही प्रकृति होगी ! जो इस वक्त हमारे पास बैठने से भाइयों को लाभ होता है, वो यदि सच्चे हृदय से हमारे शरीर छोड़ने के बाद भी याद करेंगे तो तब भी उनको वही लाभ प्राप्त होगा जो उन्हें हमारे जीवन काल में होता है ! तो आपसे निवेदन है कि काम करते, खाते-पीते, सोते-जागते, हर समय उस प्रभु की याद में रहें ! यदि इस प्रकार हर समय हमारा ध्यान प्रभु के चरणों की तरफ होगा तो हमें क्यों नहीं लाभ होगा ? (संत प्रसादी-12)

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

मैं बार-बार कहता हूँ तथा मेरा यह निजी तजुर्बा है कि गुरु की कृपा हो, परिस्थितियों की भी कृपा हो, परन्तु बिना चरित्र-निर्माण के हम आध्यात्मिकता के पूर्ण शिखर पर पहुँच जावें, यह नहीं हो सकता ! हमें जब तक सफलता नहीं मिलेगी जब तक हमारा चरित्र निर्माण नहीं हो ! पूज्य लाला जी महाराज का कथन था कि हमारा चरित्र-निर्माण हो ही नहीं सकता जब तक कि हम माया में फँसे हैं, यानी हम अपने शरीर, मन और इन्द्रियों के आधीन हैं, बुद्धि की चंचलता में फँसे हुए हैं, यदि हमें शुद्ध विवेक अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है ! तो कोशिश करें - गुरु का सत्संग प्राप्त करके उनके जीवन का अनुसरण करें ! जिस तरह भी हो इसी जीवन में अपना आचरण ठीक करें, तथा अपने चित्त पर जितने भी संस्कार-विकार पड़े हुए हैं, उनसे मुक्त हों ! जब तक हमारा चरित्र निर्माण नहीं होगा, चित्त विकृति-शून्य नहीं होगा, तब तक हमारी साधना में प्रगति नहीं होगी !

हमारा लक्ष्य तो यह है कि आत्मा में हमारी रसाई यानी स्थिति निरन्तर हो जाये ! एक क्षण भर भी हम आत्म-स्थिति की सतत अवस्था से इधर-उधर न हटें ! जो आत्मा के गुण हैं उनसे हमारे भीतर में इस प्रकार की शक्ति आ जावे कि हमारा व्यवहार भी वैसा बन जाये ! हमारा प्रत्येक कर्म स्वाभाविक रूप से हो, बिना प्रयास के हो ! यदि हमें प्रयास करना पड़ता है तो अभी हमारी स्थिति पूर्ण नहीं हुई है ! हमें अभी पूर्ण सफलता नहीं मिली है ! पूज्य लाला जी महाराज का आदेश है कि इतनी ऊँची हालत पर पहुँच कर भी हम अपने ऊपर तब तक विश्वास न करें जब तक हमारे भीतर आत्मा के वे गुण प्रकट नहीं होते जो शास्त्रों में लिखे हैं या हमारे गुरुजनों ने हमें बताये हैं ! वो गुण स्वाभाविक ही, अप्रयास ही हों, और हम उन गुणों का विस्तार करें, विकास करें ! जब तक ऐसा नहीं होता तब तक इस अभ्यास को नहीं छोड़ना चाहिए ! चित्त की जो वृत्तियाँ हैं उनसे जब तक हम मुक्त नहीं होते और हमारा आचरण निर्मल नहीं होता तब तक जीवन का जो लक्ष्य है उसमें हमें सफलता प्राप्त नहीं होगी ! **(**संत-प्रसादी : **13)**

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

मौन का अर्थ क्या है, समझ लेना चाहिए ! लोग-बाग़ कहते हैं कि हम जितना मौन करते हैं, उतने अधिक विचार आते हैं ! अभी मौन हमने समझा नहीं है ! मौन शरीर का भी मौन है, मन का भी मौनहै ! बुद्धि का भी मौन है, ज्ञान का भी मौन है ! उसके बाद आनन्द आता है, उसका भी वही रूप है, उससे भी निवृति है ! किसी के साथ आसक्ति नहीं है, किसी के साथ बंधन नहीं है ! मन, बुद्धि, आनन्द आदि सबसे आज़ाद हैं ! आगे चलकर क्या ? वो परमात्मा ही जानता है ! मौन का ही रास्ता आगे का रास्ता है ! संसार के विचारों को छोड़ो, संसार के जो बंधन हैं उनका त्याग करो ! फिर परलोक के विचार आयेंगे, वहाँ बड़ा सुख मिलता है, हमारा वो लक्ष्य नहीं है ! इन विचारों को भी छोड़ना है ! फिर छोड़ने के विचार आयेंगे, तर्क-वितर्क के विचार आयेंगे, इनको भी छोड़ना है ! अब जो मौन है, वो मौन धीरे-धीरे प्रगाढ़ होता हुआ आत्मिक मौन हो जायेगा, आत्म ज्ञान हो जायेगा, परमात्मा का रूप हो जायेगा ! इस रूप के प्रति कुछ नहीं कहा जा सकता ! इसका अनुभव करते ही जुबान कट जाती है ! वर्णन करते हैं तो मन और बुद्धि के स्थान पर आ जाते हैं ! साधना में दोनों को अपनायें, मौन साधना को भी दृढ करें तथा अपने जीवन को ईश्वरमय बनायें !

हम प्रभु की प्रसन्नता इसमें मानते हैं कि हमारा शरीर स्वस्थ हो, हमारे पास खूब पैसा हो, चाहे वह ब्लैक या घूस की कमाई से आया हो, संसार में हमारा सम्मान हो, कोई हमारी इच्छा के विरुद्ध न जाए, प्रत्येक व्यक्ति जैसा हम चाहें वैसा करे - इन बातों को हम समझते हैं कि यह ईश्वर की कृपा है, सुख है ! यदि शरीर अस्वथ हो जाये, आर्थिक कठिनाई आ जाये, लोग हमारा अपमान करें, हमें बुरा भला कहें और ऐसे में हमारे मुख से निकले कि प्रभु हमारे प्रति अन्याय कर रहे हैं - तो यह ठीक नहीं है ! सच्चा भक्त तो इन बातों से, इन मानसिक सुख-दुःखों से ऊपर है ! न वह इन दुखों की परवाह करता है, न कोई चिन्ता करता है, न इन सब में उसकी आसक्ति है ! उसका दुःख क्या है ? प्रभु की विस्मृति ! एक बच्चा माँ की गोद से अलग हो जाता है और उसके मन में उस सुख की अभीप्सा होती है तो उसके हृदय में कैसी व्याकुलता उत्पन्न होती है, वो कैसे दुःखी होता है, रोता है ? सच्ची प्रार्थना यही है, वास्तविक दुःख भी यही है - प्रभु की विस्मृति !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

लोग-बाग़ कहते हैं कि हमारा मन एकाग्र नहीं होता **!** मन एकाग्र कैसे हो **?** आपकी लगन कितनी है **?** एकाग्रता की विशेष चिन्ता न करें **!** प्रेम की चिन्ता करें कि हमारा गुरु या ईश्वर की तरफ प्रेम उत्पन्न क्यों नहीं होता, क्यों नहीं बढ़ता **?** हम संसार के व्यक्तियों से जिनके साथ हमारा व्यवहार है, थोड़ा बहुत भय रखते हैं, परन्तु ईश्वर के साथ हमारा कोई भय का भाव नहीं हैं **!** अपने मन से पूछिये कि क्या हम ईश्वर या गुरु का भय रखते हैं **?**

इसलिए पहले सतगुरु को अपनाइये **!** ईश्वर से प्रेम, व्याकुलता, विरह उत्पन्न करिये **!** मन एकाग्र होता है या नहीं, इसकी चिन्ता मत कीजिये **!** यह साधारण बात है **!** इसकी कई तकनीक हैं **!** जो पुराने अभ्यासी हैं उन्हें और अधिक समय देना चाहिए इस ओर, क्योंकि उन्हें अपने इस जीवनकाल में ही अपने स्वरुप में, या गुरु के स्वरुप में या परमात्मा के चरणों में स्थित होना है **!** सिर्फ़ थोड़ा-थोड़ा, कभी कभी, प्रकाश देख लेना या कभी -कभी शब्द सुनाई आ जाये तो शुक्र है, आपका रास्ता गलत नहीं है, परन्तु मन्ज़िल अभी दूर है **!**

प्रेम **(**आत्मा का प्रेम**)** आत्मा में स्थित होना चाहिए, तब सब दुःखों की निवृति अपने स्वरुप में स्थित होने से अन्तर में गुरुदेव के दर्शनों से होगी **!** यह जितने नाम और रूप दीखते हैं, सबका नाश होना है **!** फिर भी हम इनमें फंसे हुए हैं क्योंकि हमारा ईश्वर के साथ लगाव नहीं है **!** जैसे-जैसे आप आगे बढ़ते जायें, अपने लक्ष्य को अच्छी तरह समझते जाइये और उसको पाने के लिए जीवन की बाज़ी लगाइये, यही सच्ची साधना है **!**

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

संतों के जीवन को अपनायें ! उनके जीवन का अनुसरण करने से हमारा जीवन भी दुःख -रहित हो जायेगा, चाहे कितने ही कष्ट आजायें, हमारे भीतर की शान्ति विचलित नहीं होगी ! हमारे भीतर में मन विक्षिप्त नहीं होगा ! मन तभी विक्षिप्त होता है, दुःख तभी मानता है, जब तक हम अज्ञान में रहते हैं ! हमारे में अज्ञान तब तक है, जब तक हमारे में आसक्ति है ! जब तक हमारे में सच्चा प्रेम नहीं है, सच्ची भक्ति नहीं है, सच्चा ज्ञान नहीं है, हम दुःखी रहेंगे ! इसलिए आप सब अनुरोध है, करबद्ध प्रार्थना है, कि किताबों की ही पूजा न की जाये ! किताबों में जो ज्ञान है, उस ज्ञान की गंगा में स्नान किया जाये ! अपने भीतर में शान्ति रखें ! कितनी भी दुःखद घटना आ जाये, कितना भी सुख आ जाये, हमारी समता भंग न हो ! जब तक समता नहीं बनेगी, हमारा मानसिक सन्तुलन नहीं बनेगा, तब तक सच्ची शान्ति नहीं मिलेगी !

जब तक सतगुणों को नहीं अपनायेंगे, सतगति नहीं आयेगी, मन में कोमलता नहीं आयेगी ! कोमल मन ही स्थिर हो सकता है और स्थिर होकर आत्म्देश में प्रवेश पा सकता है, उससे पहले नहीं ! प्रसन्नता आती है जब निर्मल मन स्थिर और एकाग्र हो जाता है ! जब संकल्प-विकल्प नहीं रहते है तब ऐसी स्थिति में प्रसन्नता की, ईश्वरीय कृपा की अनुभूति होती है ! माया से बचकर रहना चाहिए ! ईश्वर से प्रार्थना करते रहना चाहिए, कभी अपने मन पर भरोसा नहीं करना चाहिए !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

सत्संग में साधना कराने वाला विचार विमुक्त होकर बैठे, वह यह समझे कि मैं कुछ भी नहीं हूँ ! गुरुदेव-ईश्वर की कृपा बरस रही है ! आप भी विचारों से विमुक्त होकर कोशिश करते रहें कि आपका मन जितना भी हो कम से कम भागे ! दृढ़ता के साथ हुज़ूरी में बैठें ! गुरु और शिष्य में जो द्वैत भाव है वह जाता रहे ! यह ख़्याल नहीं करना कि हम दो हैं या एक हैं ! यह द्वन्द है ! मन ही तो कहेगा कि वह एक है ! वह तो एक से अनेक हो जाता है ! परमात्मा तो द्वन्द से परे है, इसलिए वह दो भी नहीं है ! वह जैसा है वैसा ही रहता है, ऐसा कबीरदास जी कहते हैं - " एक कहूँ तो है नहीं, दूजा कहूँ तो गार ! जैसा है तैसा रहे, कहे कबीर विचार !

साधना में, खासकर भक्ति में, दो बातें आवश्यक हैं - एक प्रीतम से प्रेम, दूसरा भय ! साधक की स्थिति पतिव्रता स्त्री की सी होनी चाहिए ! भय रहना चाहिए ! अधिक साधना ज़रूरी नहीं है - सच्चा प्रेम होना ज़रूरी है ! हम तकनीकी साधना करते हैं - ज्ञान की बातें करते हैं परन्तु भीतर से कोरे हैं ! हमें अपनी गलतियों को देखकर उन्हें सुधारना है ! सरलता, दीनता आनी चाहिए ! अन्दर में गुण नहीं हैं तो सच्चे हृदय से प्रार्थना नहीं होगी ! सर्वस्व न्योछावर करके तपस्वी बनें !

----- गुरु वाणी -----

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

सन्यासी को सन्यास की दीक्षा जब दी जाती है तब उसके सारे बाल मूँड़ दिए जाते हैं, एक बाल भी नहीं रहने दिया जाता है, अर्थात जब उसमें एक भी दोष नहीं रह जाता, वो अग्नि-स्वरुप हो जाता है, तब अग्नि-रूप गेरुवे वस्त्र उसको पहना दिए जाते हैं **!** उससे पहले गेरुवे कपडे पहनने का अधिकार किसी को नहीं है **!** हमारे शास्त्रों के अनुसार सन्यास की दीक्षा जब तक भीतर में से अवगुणों का विनाश नहीं हो जाता उससे पहले नहीं दी जाती **!**

इसी तरह हम भी सत्संग में आकर सत्संगी तो कहलाते हैं परन्तु गुरु महाराज की बातों पर अनुसरण करना तो दूर की बात है, मनन भी गम्भीरता से नहीं करते **!** गुरु में पूरी आस्था न हो तो उनकी संगति न करें **!** जिस धर्मगुरु पर विश्वास है उसके अनुसार चलिए **!** उसके अनुसार चलना ही उस महापुरुष के चरणों में पुष्प चढ़ाना है **-** अपने शीश को रखना है **!** गुरु नानक देव जी ने दो शब्दों में बता दिया है कि स्तुति करने का क्या मतलब है **-**

" तू तू करता तू भया, मुझ में रही न हूँ,

आप अपना मिट गया, जत देखूं तत तू **!**"

गुरु या ईश्वर की स्तुति करने का मतलब है 'तू तू करूँ' अर्थात कोई सा नाम भी लूँ **-** राम कहूँ, रहीम कहूँ, सतनाम कहूँ, एक ही बात है **!** उसका हर समय इतना सुमिरन और गुणगान करूँ, उसको हर समय हर एक में देखूँ कि ऐसा करते-करते स्वयं यानी अपनी हूँ या अहं को भी भूल जाऊँ **! (**राम सन्देश: जुलाई-अगस्त,**1999.)**

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

सब बातों का आधार चरित्र-निर्माण करना है ! साधना में मृत्यु-वरण करना बड़ा साहस का काम होता है ! पता नहीं अगली सांस आये या न आये, इसके लिए तैयार रहना चाहिए ! यह ख़्याल रहे कि हमें अपने लक्ष्य की, ईश्वर की, प्राप्ति करनी है और उसके लिए समय बर्बाद नहीं करना है ! समय का सदुपयोग करें ! मृत्यु तो आयेगी, यह तो एक सत्य है ! यह प्रत्येक व्यक्ति जानता है ! मृत्यु से डरना नहीं चाहिए, मृत्यु का स्मरण रखना चाहिए ! जो लोग मृत्यु का स्मरण रखते हैं, उनसे बुरे कर्म नहीं होते ! मृत्यु का स्मरण करने से ईश्वर-प्राप्ति का लक्ष्य सुगम हो जाता है ! अपनी दिनचर्या को अधिकाधिक प्रभुमयी बनायें ! घर-परिवार का वातावरण भी प्रभुमयी बनाना चाहिए !

सेवा कई प्रकार की होती है ! हाथ-पाँव की सेवा होती है, धन से सेवा होती है, परन्तु मन की सेवा बहुत ऊँची है ! यानी जो आपके इष्टदेव कहें उसमें तनिक भी संदेह न लावें ! उनकी बातों को ईश्वर का हुक्म समझें ! उनकी आज्ञा का पालन करें !आप यदि ध्यान से इतना ही कर सकें कि जो कुछ गुरु महाराज का आदेश है उसका पालन करते चले जायें, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मुक्ति, अर्थात आत्मा का साक्षात्कार दूर नहीं है ! अतः जो भी आपके इष्टदेव के आदेश हैं, उनमें तनिक भी सन्देह न लावें ! उनका पालन करना चाहिए ! यह गुरु की सर्वोत्तम सेवा है ! इस सेवा से आप आत्म-साक्षात्कार कर अपना जीवन जीवन सफल कर लेंगे !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

समर्पण का अर्थ यह है किअपनी गति को परमात्मा की गति में मिला देना ! आप एक यंत्र बन जायें ! जैसे प्रभु चलायें वैसे ही यंत्र को चलने देना है ! परन्तु केवल इतना कहने मात्र से तृप्ति नहीं होती ! यह तो जीवन की साधना का अन्तिम चरण है ! जब हम ईश्वर से प्रेम करने लगते हैं तो प्रकृति की ओर से जो भी दुःख आयेगा, हमें वह दुःखमय अनुभव नहीं होगा, वह ईश्वर की प्रसादी के रूप में अनुभव होगा ! दुःख-सुख की मिलौनी का नाम ही संसार है ! परन्तु जब हम ईश्वर से प्रेम करने लग जाते हैं तो हमें ईश्वर की शक्ति मिल जाती है, जिससे हमारा मन शुद्ध होता है ! बुद्धि में विवेक आ जाता है, आत्मा की समीपता आ जाती है ! तब हम दुःख - सुख को समझते हैं कि यह तो ईश्वर की रासलीला है ! वास्तव में हमें दुःख-सुख दोनों में आनन्द आता है !

साधारणतया सत्संगी का मन जब लगने लगता है तो एक सूक्ष्म सा अहंकार हो जाता है, वह कहता है कि मैं तो बहुत बढ़ गया, परमात्मा जैसा हो गया ! यह बहुत बढ़ी भूल है ! हमारे चित्त में इतनी अधिक मलीनता है कि थोड़ी सी एकाग्रता के बाद यह सोच लेना कि आखिरी मन्ज़िल मिल गयी, यह बड़ी भूल है ! कोशिश करो कि गुरु, आत्मा या परमात्मा के जो गुण हैं, वे गुण आपमें विकसित हों ! जब तक वे गुण विकसित नहीं होते और सहज अवस्था नहीं आती, आपका सहज में वैसा व्यवहार नहीं बनता है, तब तक मन्ज़िल दूर है !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

सारे दुःखों - शारीरिक,मानसिक, आर्थिक, भौतिक अथवा आध्यात्मिक - का कारण मनुष्य स्वयं ही है ! जैसे बहती नदी में से कुछ पानी अलहदा होकर किसी गढ्ढे में गिर जाये तो कुछ समय तक तो उसमें ताज़गी रहती है परन्तु बहाव के अभाव में कुछ समय बाद उसमें कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं, पानी सड़ने लगता है ! यही हालत हम सबकी है ! हम भी परमपिता परमात्मा के चरणों से अलहदा हो गए हैं ! परमात्मा ही ज्ञान का भण्डार व सुखों की खान है ! उस भण्डार में से बिलगाव ही हमारे दुःखों का एकमात्र कारण है ! जब तक हम पुनः उस भण्डार में अपने आपको नहीं मिलाते, तब तक हमारे दुःख भी ख़त्म नहीं होंगे !

हमें जब ईश्वर की समीपता की अनुभूति होने लगती है तो हमें अपने भीतर में कुछ शांति, कुछ आनन्द सा अनुभव होने लगता है, हमारा विश्वास बढ़ता है ! इस अनुभूति को दृढ करने के लिए सच्चे संतों का सत्संग करना चाहिए ! महापुरुषों के जीवन चरित्र पढ़ने चाहिए ! गीता, रामायण जैसे महान ग्रंथों का अध्ययन करना चाहिए ! अपने जीवन को मर्यादा में ढालना चाहिए ! ईश्वर का नाम लेने के साथ-साथ चिन्तन भी करना चाहिए ! महान परमपिता जो हमारा आधार है, हम उसके अंश हैं ! वह अंशी हैं, हम उसके अंश हैं !हम आत्मा हैं, वह परमात्मा हैं, वह सागर हैं, हम उसकी एक बूँद हैं ! मात्रा में भले ही अन्तर हो परन्तु दोनों के गुण एक जैसे हैं !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

सेवा कई प्रकार की होती है **-** हाथ-पाँव की सेवा होती है, धन से सेवा होती है, परन्तु मन की सेवा बहुत ऊँची है **!** यानी जो कुछ भी आपके इष्टदेव कहें, उसमें तनिक भी संदेह न लावें **!** उनकी बातों को यह समझें कि यह ईश्वर का हुक्म है, और उनकी आज्ञा का पालन करें **!** यदि यही बात ध्यान में रखें, और जो भी गुरु महाराज के आदेश हैं उन्ही का पालन करते चले जायें, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आत्मा का साक्षात्कार दूर नहीं है **!** परन्तु हम ऐसा करते नहीं हैं **!** गुरु की बातों की तरफ ध्यान नहीं देते, अपनी मनमानी करते हैं **!** जब हमने दीक्षा लेते वक्त तन, मन, धन देने का वचन गुरु को दिया तो फिर हमारा इन चीज़ों के प्रति मोह क्यों है **?** परन्तु क्या है कोई ऐसा व्यक्ति जिसको अपने शरीर, अपनी धन-सम्पत्ति या स्त्री-पुरुषों के सम्बन्धों के प्रति मोह न हो, या जिसने अपने विचारों को छोड़ दिया हो **!** मैं आपसे बारम्बार यही अनुरोध करूँगा कि जो आपके इष्टदेव के आदेश हों, उनके पालन में कभी भी, तनिक भी, संकोच नहीं करना चाहिए **!** उनका पूरा-पूरा पालन या अनुसरण करना चाहिए **!** यही सर्वोत्तम 'गुरु-सेवा' है **!** विश्वास मानिये, इस सेवा के द्वारा आप आत्म-साक्षात्कार करके अपना जीवन सफल कर लेंगे, मानव जीवन को सार्थक और धन्य कर सकेंगे **! (**संत-प्रसादी: **13)**

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

हम जानते हैं कि ईश्वर सर्वज्ञ है, सर्वव्यापक है, वह हमारी चाल-ढाल को देखता है, हमारे व्यवहार को देखता है ! परन्तु चूँकि हमारे भीतर में ईश्वर के या गुरु के प्रति पूर्ण श्रद्धा नहीं है, तभी तो हम बुरे काम कर बैठते हैं ! हमसे गलत काम क्यों होते हैं ? इसलिए क्योंकि हमारे भीतर में इस विश्वास का आभास भी नहीं है कि ईश्वर हमें देख रहा है ! यह केवल एक व्यक्ति की ही नहीं, बहुतों की, अधिकतम लोगों की, हालत है ! हम ईश्वर का केवल नाम ही लेते हैं, कहते हैं, हाँ साहब ! हम तो ईश्वर की पूजा करते हैं ! वास्तव में पूजा करता कोई नहीं है ! यदि हम पूजा करते हैं, तो हमसे बुरे कर्म क्यों और कैसे होते हैं ?

तो कोशिश करें, साधना करें, समाधि अवस्था में पहुँचने की भी कोशिशें करें, जैसा कि हमारे गुरुजनों ने हमें आज्ञा दी है, सिखाया है ! हमें चाहे जहाँ से भी दीक्षा मिली हो, आपके इष्टदेव जैसा फरमायें, उसी विश्वास के साथ, श्रद्धा से साधना करें ! यह नहीं कि सत्संग में गए, दीक्षा ले ली, कुछ दिनों बाद कोई और महात्मा आये, उनसे भी दीक्षा ले ली ! ऐसा करने वाला साधक कभी भी सफल नहीं हो सकता ! एक के बन कर रहो ! जैसा भी वह रास्ता बताये, पक्के संकल्प के साथ उसका पालन करो ! तनिक भी उसमें संकोच न हो ! यही संतों की अमृतवाणी है ! अपने इष्टदेव के आदेशों के अनुसार ही अपना जीवन बनाने की कोशिश करो ! इसी में कल्याण है - आत्मसाक्षात्कार एवं परमात्मा से मिलने की सम्भावना है ! अपना जीवन दांव पर लगा दो ! जीवन का भी बलिदान देना पड़े, तो भी समझिये कि परमात्मा आपको सस्ते में ही मिला ! **(संत-प्रसादी:13)**

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

हम सब कहते हैं कि हम क्या करें, अभी तक पूजा में हमारा मन नहीं लगता ! कारण क्या है मन न लगने का ? स्पष्ट है कि हम रस्मी तौर पर पूजा करते हैं, मनन नहीं करते ! मैं बार-बार कहता हूँ, थोड़ा पढ़ो, बेशक थोड़ी पूजा करो, परन्तु दस-पाँच मिनिट रोज़, नहीं तो सप्ताह में, महीने में, कभी न कभी, मनन पर ज़रूर समय देना चाहिए ! कम से कम इतना तो सोचो कि मैं कौन हूँ ? प्रवचन पढ़ या सुन लिया, थोड़े समय के लिए आनन्द आ गया ! ये तो कोई विशेष बात नहीं हुई ! मनन करें कि मैं कौन हूँ, मैंने पढ़ा या सुना क्या, उसका सार क्या है और मैंने उसे अपने जीवन में किस सीमा तक अपनाया है !

गंभीर रूप से मनन करने पर अवश्य हमारे ध्यान में आयेगा कि ये शरीर मैं नहीं हूँ, प्राण नहीं हूँ, मन नहीं हूँ, बुद्धि नहीं हूँ, आनन्द भी नहीं हूँ ! मैं तो ईश्वर हूँ, परम पवित्र परमात्मा हूँ, आत्मा हूँ ! परन्तु केवल कहने से नहीं, यह ज्ञान-प्राप्ति तो करने से होगी ! जब मनन करेंगे तो आपके भीतर का रास्ता खुलता जायेगा ! गुरु ने आपको जो साधना करने का तरीक़ा बतलाया है, उसके महत्व को, सार को समझें, केवल राम-राम कहने से सब कुछ नहीं हो जायेगा !

हम स्तुति-गान करें ईश्वर का, ईश्वर के प्रकट रूप गुरु का, गुणगान खूब करें पर इसके साथ-साथ अपने अवगुणों को भी देखते चले जायें ! अपने गलत आचरण अर्थात अवगुणों की चादर एक झटके से तुरन्त उठा दें ! स्तुति करते हुए धीरे-धीरे अपनी ज़िन्दगी से अहंकार, दोषदर्शन, आलोचना और प्रतिक्रिया जैसे अवगुणों को निकाल फेंकें और आत्मा की चादर को साफ़ कर लें, निर्मल बना लें ! वह इतनी निर्मल हो जाये कि जब हमारा अन्त समय आवे तो हम ऐसा कुछ कहने के योग्य हो सकें कि " दास कबीर जतन से ओढ़ी, ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया !"

---- गुरु वाणी ----

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

हम सबके लिए आवश्यक है कि त्याग करें - किसका त्याग करें, अपनी इच्छाओं, अपनी आकांक्षाओं, अपनी वासनाओं, अपनी मान-बड़ाई व नामवरी का ! यह सबसे मुश्क़िल काम है ! इस संसार में सबसे कठिन है - त्याग ! जरा इसकी गहराई में जायें ! और कुछ नहीं कर सकते तो कम से कम अपने विचारों को तो कम करें और चिन्तन का अभ्यास करते-करते विचार शून्य हो जायें ! अगर कोई व्याकुलता हो भी तो वह मात्र भगवान् के दर्शन की हो !

****

जब भी मन उदास हो अथवा चित्त क्षुब्ध हो गया हो, या किसी के किसी कर्म से या कुछ कहने से दिल पर आघात हुआ हो, तो उस वक्त बच्चे की तरह प्रभु के चरणों में रोने की कोशिश करनी चाहिए ! इससे सच्चे विचार, सच्ची भावना, प्रभु के सम्मुख प्रकट हो जाती है ! जिस तरह बच्चा करुण होकर माँ को पुकारता है, उसी तरह प्रभु को पुकारना चाहिये ! सत्संग में बैठकर अपने मन की भावना मूक होकर, मौन में प्रकट करना चाहिये !

****

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

हमारे जीवन का कुछ तो लक्ष्य होना चाहिए **!** जिस व्यक्ति के जीवन का कोई लक्ष्य नहीं, उस व्यक्ति का जीवन क्या है **?** कुछ तो आदर्श होना चाहिए **!** उस आदर्श की प्राप्ति के लिए मनुष्य को अपना सब कुछ बलिदान देने के लिए तैयार रहना चाहिए **!** आदर्श बिना बलिदान के प्राप्त नहीं होता **!** किसी प्रकार का आदर्श हो, इसमें कोई तर्क नहीं है **!** आप धर्म को अपनाते हैं, आप संत मत में या अन्य किसी सम्प्रदाय में हों, कोई यह नहीं सिखाता कि झूंठ बोलो, हिंसा करो, कोई सम्प्रदाय बुराई नहीं सिखाता **!** केवल अंतर इतना है कि इन सब बातों की शिक्षा के अलग-अलग सम्प्रदायों ने भिन्न-भिन्न तरीके अपनाये हैं, सबका लक्ष्य एक ही है **!**

सारे आवरणों को हटा कर आत्मा को परमात्मा में विलय करने का अभ्यास करना है **!** हमारी साधना का वास्तविक लक्ष्य यही है **!** इसके लिए दीवानगी, विरह, व्याकुलता या गोपियों जैसा पागलपन चाहिए, इसके लिए त्याग चाहिए **!** कोई भी रास्ता अपना लीजिये **-** भक्ति का मार्ग, कर्म अथवा ज्ञान का मार्ग, परन्तु उसे पाने के लिए सतत प्रयास करना जीवन की सर्वोत्तम उपलब्धि है **!** ईश्वर से, गुरु से, उनकी कृपा के लिए दीनता पूर्वक प्रार्थना करते रहना चाहिए **!** इससे रास्ता सरल हो जाता है **!** परमात्मा प्रेम है और उसकी प्राप्ति का रास्ता भी प्रेम है **!** सारी व्याख्या प्रेम की है **!** प्रेम ही दूसरा नाम आत्मा का है **!** जो परमात्मा के गुण हैं वो ही गुण प्रेमी के होने चाहिए **!**

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

हमारे भीतर में राग-द्वेष की भावना न हो, घृणा न हो, ईर्ष्या की भावना न हो ! झूँठ बोलने की आदत न हो ! हमारे भीतर में प्रेम की ज्योति प्रकाशित या विकसित होती रहे ! हम सबसे प्रेम करें क्योंकि प्रेम सर्वव्यापक है ! हमारी दृष्टि ऐसी होनी चाहिये कि सबमें ईश्वर के दर्शन करें ! हम जब सबमें ईश्वर के दर्शन करेंगे तो भीतर में की बुराइयाँ अपने आप अप्रयास ख़त्म होती चली जायेंगी ! हमारे मन में कोई बुरी भावना न हो, चित्त में पुराने संस्कार न हों, और हमारी बुद्धि तर्कमय न हो !

****

शरीर स्वस्थ है, मन निर्मल है तो भीतर में प्रसन्नता होगी ! प्रसन्नता किस वक्त आती है ? जब चित्त निर्मल होने के बाद स्थिर हो जाता है, एकाग्र हो जाता है, संकल्प-विकल्प नहीं रहते ! संकल्प-विकल्प से मुक्ति की स्थिति में ही प्रसन्नता की अनुभूति होती है ! प्रसन्नता के बाद मानसिक शांति की अनुभूति होती है, तत्पश्चात आत्मा की अनुभूति होती है !

****

ईश्वर के समीप जाने के लिए यह भी आवश्यक है कि हम शरीर को स्वस्थ रखें ! स्वस्थ शरीर में ही साधना की जा सकती है !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

हमारे मन में जब तक कर्ता-भाव रहेगा, भोक्ता-भाव रहेगा, तब तक कर्मों का चक्र चलता ही रहेगा और हम भवसागर से कभी भी पार नहीं उतर पायेंगे ! मुक्त नहीं होंगे, स्वतंत्र नहीं होंगे ! मनुष्य में पाँचों इन्द्रियाँऔर छठा मन, ये सब ही बड़े प्रबल होते हैं ! ये सारे मिलकर मनुष्य को इस प्रकार जकड लेते हैं कि वह युग-युगान्तर से कोशिश करता है, अभ्यास करता है कि किसी तरह से वह इन इन्द्रियों से मुक्त हो जाये, इनके वशीभूत न हो, परन्तु यह सहज रूप में हो नहीं पाता ! कोई ज़्यादा बोलता है, कोई खाने में अधिक रस लेता है, तो किसी को कानों से निन्दा सुनने में बड़ा आनन्द आता है ! सबसे ज़्यादा मनुष्य की जो इन्द्री खराबी करती है वह उसकी आँख है ! हमारे पास एक ही साधन है, वो है, प्रार्थना ! निर्बल होकर, कोमल हृदय से प्रभु के चरणों में प्रार्थना करें ! अपने सारे बल, सारे योग, सारी चतुराई छोड़कर प्रभु के चरणों में प्रार्थना करें, रोयें, गिड़गिड़ायें ! प्रभु का विरद है कि वे शरण पड़े की लाज रखते हैं !

वास्तव में हमारे अतीत के संस्कार होते हैं, उनके कारण जो हमारा स्वभाव बनता है, उससे कोई भी व्यक्ति स्वतंत्र नहीं है ! उन संस्कारों को ख़त्म करना होगा ! यह बड़ा कठिन है ! हमारी इच्छा-आशाओं की पूर्ति नहीं होती है तो असंतुष्टि होगी, असन्तोष होगा, असन्तोष के कारण क्रोध होता है, क्रोध के कारण बुद्धि मलिन हो जाती है ! बुद्धि मलिन हुई तो सब कुछ ख़त्म हो जाता है ! ये सब रास्ते की रुकावटें हैं, इन्हें दूर करने का, इनसे मुक्त होने का, सतत और गंभीर प्रयास करना होगा ! इसके साथ, बार-बार महापुरुषों के सत्संग का लाभ उठायें ! इससे सरल कोई रास्ता नहीं !

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन महात्मा डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज **)**

हमारे यहाँ का तरीक़ा कश्फ़ यानी खेंच का है **!** शिष्य की आत्मा को गुरु अपनी शक्ति से ऊपर को खेंच लेता है **!** जैसे किसी को दिल्ली की सैर करानी हो और उसे मोटर में बिठाकर साठ मील की रफ़्तार से दिल्ली पहुँचा दिया जाये तो उसे रास्ते की चीज़ों का खास पता नहीं चलेगा, सिर्फ एक झलक सी दिखाई देगी **!** इसी तरह जब गुरु अपनी शक्ति से शिष्य की आत्मा को ऊपर चढ़ाता है तो शिष्य को बीच के स्थानों का खुलकर ज्ञान नहीं होता **!** बाद में वोह जहाँ से चला था वहीं लेकर छोड़ देते हैं **!** इस कश्फ़ **(**खेंच**)** के कारण शिष्य को ऊपर के स्थानों का आनन्द थोड़ी देर के लिए प्राप्त हो जाता है और कुछ न कुछ नया अनुभव हो जाता है **!**

बाद में शिष्य अपने अभ्यास द्वारा मन को शुद्ध करके एक-एक चक्र को पार करके ऊपर चढ़ता जाता है और उसको रास्ते की हरेक चीज़ ब्योरेवार मालूम होती जाती है **!** इस तरीक़े में पहले इख़लाक़ की दुरुस्ती, चरित्र निर्माण, बहुत ज़रूरी है और गुरु से प्रेम होना चाहिए **!** अभ्यास बाद में होता है **!** कश्फ़ के तरीक़े में शिष्य को डिटेल **(**ब्यौरा **)** का पता नहीं चलता और यह भी मालूम नहीं होता कि हम कौन से चक्र से गुज़र रहे हैं **!** शब्द तक का पता नहीं चलता **!**

हमारे यहाँ का तरीक़ा 'जज़्बुल्ल सलूक ' **(**भक्ति-ज्ञान अर्थात पहले भक्ति फिर ज्ञान **)** का है **!** गुरु प्रेम के वशीभूत होकर, अपनी शक्ति से शिष्य की सुरत को ऊपर खेंच देता है **!** शिष्य की आत्मा गुरु की आत्मा के साथ जाती है और ऊँचे स्थान का आनन्द लेती है **!** मगर जब तक शिष्य का मन शुद्ध नहीं हो जाता तब तक आत्मा वहाँ ठहर नहीं पाती **!** शिष्य उस आनन्द को नीचे गिरने पर भी भूल नहीं पाता और उसी की खिंचावट **(**आकर्षण**)** में वह आगे तरक़्क़ी करता जाता है **!**

गुरु की शिष्य पर ऐसी ख़ास कृपा के लिए पहली शर्त यह है कि गुरु और शिष्य में अगाध प्रेम हो, मन की दुई मिटकर एक हो जाये, दोनों का तम और रज ख़त्म हो जाये, दोनों का सतोगुणी मन मिल जाये, तब फ़ायदा होगा वरना गुरु कितनी भी कोशिश करें, आत्मा का अनुभव नहीं करा सकता **!** **(**राम सन्देश : मई-जून, **1999)**

----- गुरु-वाणी -----

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज **)**

हमारे यहाँ का साधन प्रेम का साधन है **!** अपने आपको परमात्मा में लय कर देना है **!** इसमें द्वैत नहीं होता **!** थोड़े दिन के लिए हम एक दूसरे से प्रेम करते हैं, जिससे यह प्रेम बढ़ते-बढ़ते हमारा स्वभाव बन जाता है **!** हम अपने में गुरु का, परमात्मा का, रूप देखें **!** हमारे कानों में जो स्वर पड़े, वह ऐसा मालूम हो कि ॐकार की ध्वनि है **!** सबमें वही ध्वनि है **!** ॐ, ॐ, की आवाज़ है **!** अनहद शब्द की झंकार है **!** भीतर ही नहीं, बाहर भी **!** भीतर में, बाहर में, सबमें, सब ओर, ईश्वर, ईश्वर ही दिखाई दे **!** हमारी जिव्हा से जो शब्द निकलें वे मधुर शब्द हों, ईश्वर का प्रेम लिए हुए हों **!** हम जो भी व्यवहार करें वह दैवी-गुणों को लेकर करें **!** यह व्यवहार अप्रयास हो, प्रयास न करना पड़े **!** यह सहज समाधि है **!** हमारी आँखें बन्द हैं तब भी प्रेम है, बातचीत कर रहे हैं तब भी प्रेम है, हमारी बातों में, व्यवहार में भी प्रेम है **!** सारा संसार हममें समाया हुआ है और हम सारे संसार में समाये हैं **!** ये ही विश्व -कल्याण की भावना हो जाती है **!**

****

हमारे जीवन का लक्ष्य है - हमारा आध्यात्मिक प्रेम **!** प्रेम महान है, बहुत ऊँचा है **!** केवल प्रातः-सांय साधना में बैठने से सन्तुष्टि नहीं कर लेना चाहिए **!** इस प्रेम-ज्योति को सारे संसार में प्रकाशित करना

होगा **!** हमें अपने सम्पूर्ण जीवन को प्रेम-मय बनाना होगा **!** आपके सम्पर्क में जो भी आये, और उसके साथ आपका जो भी व्यवहार हो, उसमें प्रेम हो, उसमें ईश्वर के प्रेम का विकास हो, प्रेम का प्रसार हो **!**

****

हमारी साधना प्रेम ही प्रेम है **!** केवल प्रेम ही है **!** जो कोई सीधा ईश्वर से प्रेम कर सकते हैं, वे भाग्यशाली हैं **!** जो ऐसा नहीं कर सकते वे ऐसे व्यक्ति से प्रेम करें जो पूर्णतया ईश्वर से तदरूप है **!**

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

हमारे व्यवहार में दीनता, मधुरता व प्रेम होना चाहिए ! जब तक हम इन गुणों को नहीं अपनायेंगे, हमारे भीतर में शांति कैसे हो सकती है ! यह वैज्ञानिक नियम है कि प्रत्येक व्यक्ति के भीतर में तरंगें **(vibrations)** उठती रहती हैं ! यदि हमारे भीतर में सच्चे और अच्छे भाव होते हैं तो वायुमण्डल शुद्ध रहता है और यदि बुरे विचार उठते हैं तो हम वायुमण्डल दूषित कर देते हैं ! जो कोई भी आपके समीप आएगा, उस पर भी आपक विचारों का प्रभाव पड़ेगा ! इसीलिए आपके परिवारों में छोटी-छोटी बातों पर लड़ाई-झगड़ा हो जाता है ! इसलिए सावधान रहना चाहिए, ख़ास तौर पर पुराने अभ्यासियों को ! यदि कोई बुरे विचार मन में आ भी रहे हैं तो घर के बाहर चले जाना चाहिए ! हमारे विचारों का प्रभाव घर के प्रत्येक सदस्य पर पड़ता है ! ऐसा जीवन जियें जो आनन्द-मय हो, कुशलमय हो ! भीतर की कुशलता, भीतर का आनन्द ही आपको ईश्वर के समीप ले जायेगा ! गुरुदेव भीतर की अशांति को फ़ारसी में फ़रमाया करते थे कि हम भीतर में 'मलाल' रखते हैं ! सांसारिक व्यक्ति को भले ही यह मलाल दुःख न दे परन्तु जो व्यक्ति इस आध्यात्म के रास्ते पर आ गया है यदि उसके हृदय में मलाल उत्पन्न हो जाता है तो यह बड़ी दुःख देने वाली, व हानिकारक हालत होती है ! आदमी जलता है ! अग्नि से जलकर इतना दुःख नहीं होता जितना दुःख मलाल के कारण होता है ! पूज्य गुरु महाराज भी प्रयास करते रहे परन्तु अब स्थिति और बिगड़ी है, कुछ सुधरी नहीं है ! इसलिए हम सब लोग मिलकर कोशिश करें ! यह सत्य है कि हम सब संसार में रहते हुए आन्तरिक शांति चाहते हैं ! इसके लिए हमें थोड़ा सा बलिदान देना होगा - अपने अहंकार का बलिदान ! हम स्वयं अपने अहंकार का बलिदान न देकर दूसरों को दोषी बनाते हैं ! इससे हमारा अहंकार और पुष्ट होता है, अशांति और दृढ होती है ! इससे बचें ! **(**संत प्रसादी: **13)**

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

हमेशा स्व-निरीक्षण करते रहना चाहिए ! जो भी त्रुटियाँ अपने भीतर में देखें, उनसे निवृत होना चाहिए, उन त्रुटियों को दूर करना चाहिए ! यदि आपसे स्वयं ऐसा नहीं हो पाता, तो आपने जिससे दीक्षा ली है, जिसे आपने अपना गुरु बनाया है, उनके चरणों में जाकर प्रार्थना करनी चाहिए ! उनसे सहायता के लिए निवेदन करना चाहिए ! अपने आपको भीतर में साफ़ करते चले जायें !

****

ईश्वर से प्रेम करिये या जो ईश्वर के प्रेमी हैं उनकी सेवा करिये - एक ही बात है ! जिस व्यक्ति के भीतर में ईश्वर के गुण हों उस व्यक्ति की सेवा करिये ! इसी से हमारा उद्धार हो जायेगा ! सेवा करने के मतलब है उस व्यक्ति के जीवन के अनुसरण कीजिये ! ' तू, तू, करता तू भया, मुझमें रही न हूँ !" यानी उसकी सेवा करते हुए, उसका जीवन अपनाते हुए, उसके जीवन की अच्छी बातें अपनाते हुए, वैसे ही आप बन जायें ! यह रास्ता सरल है !

****

भक्ति सिखाई नहीं जाती, भक्ति हो जाती है ! यह बड़ा कठिन मार्ग है, परन्तु घबराना नहीं चाहिए ! गुरु या ईश्वर के गुणों को अधिकाधिक अपने जीवन में उतारना चाहिए ! सर्वस्व न्योछावर करने के लिए तैयार रहें ! श्रद्धा, विश्वास, भाव और दीनता से सहनशीलता को अपनायें ! अपने मन पर कभी भरोसा नहीं करें ! ईश्वर कृपा के सहारे जीवन यापन करें !

गुरु-वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

हर साधक का यह पुनीत कर्म व धर्म है कि वह संतमत के उसूलों पर चलकर परमात्मा का साक्षात्कार करे और दुनियाँ के सामने अपने आपको नमूने के रूप में खड़ा करे ! आपको परमात्म -प्रेम में सराबोर देखकर हर जिज्ञासु और दुनियाँदार आपके सिद्धांतों में विश्वास ला सकेगा ! जब तक भीतर में, अन्तर में, विश्राम एवं शांति नहीं होती तब तक भीतर में इच्छित आनन्द का अनुभव नहीं होगा ! अपने विचारों के प्रति ध्यान न दें, उपराम रहें ! वर्तमान में जीने का अभ्यास करें ! अतीत का निरंतर खेद न करते रहें ! बीच-बीच में प्रार्थना करते रहें - " हे प्रभु ! मैं आपको एक क्षण के लिए भी न भूलूँ, आपके स्वरुप तथा गुणों की सदैव स्मृति करता रहूँ, मुझे सिर्फ आपका सच्चा प्रेम ही चाहिए - प्रदान करें !

साधना में दोनों को अपनायें - मौन साधना को भी दृढ करें तथा अपने जीवन को भी 'ईश्वरमय' बनायें ! ईश्वर के क्या गुण है, क्या रूप है ? क्षमा, क्षमा, क्षमा ! क्षमा किसको करना है ? अपनों को क्षमा करना तो सरल हो सकता है, परन्तु हमारे जो जान लेवा हैं, जो शत्रु हैं, उनको क्षमा करो ! बार-बार क्षमा करो, क्षमा करना आपका स्वरुप बन जाये ! जब तक हम दीनता, सेवा, प्रेम, सहनशीलता, जैसे गुण अपने भीतर में, अपने व्यवहार में विकसित नहीं करते, तब तक हम अधिकारी नहीं बन सकते !

गुरु - वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

साधना में जब तक मन शुद्ध न हो जाये तब तक भगवान की कीर्ति का गुणगान करते रहना चाहिए ! जब देखें कि अब मन शान्त हो गया है, आगे बढ़ने के योग्य हो गया है, तब मौन की साधना करें ! यदि चित्त मलीन है तो आप कितनी प्रतीक्षा करते रहिये, आत्मा का प्रकाश दिखाई नहीं देगा ! भीतर में चित्त को धोना है, और वह निरन्तर धुलता रहे - भाव द्वारा, प्रेम द्वारा, ज्ञान द्वारा ! इससे धीरे-धीरे बाहरी व्यवहार भी शुद्ध होता जायेगा !

****

दर्शन का अर्थ है कि जो गुरु है, परमात्मा है, यदि वैसे ही गुणी हम बनते जाते हैं तो समझना चाहिए कि हमें दर्शन का कुछ लाभ हो गया ! रस्मी तौर पर या दिखावे के लिए किसी महापुरुष का दर्शन या किसी तीर्थ की यात्रा करना, विशेष लाभप्रद नहीं होता ! इतना लाभ तो ज़रूर होता है कि कुछ सदप्रेरणा मिलती है, परन्तु वास्तविक दर्शन का मतलब, जैसा संतों ने भी कहा है, वो यह है कि ईश्वर जैसा हो जाना !

****

भक्ति और मौन साधना व उपासना दोनों का अपना-अपना महत्व है ! मौन में जिन गुणों को आपने सराहा, जिनका कीर्तन किया था, वे साकार होकर आपके चित्त में, दिमाग में बसते हैं ! आप जैसे विचार करेंगे, वैसे ही आप बनेंगे ! परमात्मा की पूजा - परमात्मा के गुणों की पूजा, जिसका मतलब है परमात्मा के गुणों को सराहना, उन गुणों को अपनाना और उन्हें अपने व्यवहार में विकसित करना ! परमात्मा का एक विशेष गुण है - क्षमा करना ! यदि किसी से शत्रुता है तो उसे क्षमा कर दें ! क्षमा परमात्मा का विरद है, अभिन्न रूप है ! उसी प्रकार का आपका स्वभाव बन जाये ! कोई कितनी भी उत्तेजना दे, कितना भी आपका विरोध करे, आप उसे क्षमा कर दें !

गुरु – वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

सारे आवरणों को हटा कर आत्मा को परमात्मा में विलय करने का अभ्यास करना है ! हमारी साधना का वास्तविक लक्ष्य यही है ! इसके लिए दीवानगी, विरह, व्याकुलता या गोपियों जैसा पागलपन चाहिए, इसके लिए त्याग चाहिए ! कोई भी रास्ता अपना लीजिये - भक्ति का मार्ग, कर्म अथवा ज्ञान का मार्ग, परन्तु उसे पाने के लिए सतत प्रयास करना जीवन की सर्वोत्तम उपलब्धि है ! ईश्वर से, गुरु से, उनकी कृपा के लिए दीनता पूर्वक प्रार्थना करते रहना चाहिए ! इससे रास्ता सरल हो जाता है ! परमात्मा प्रेम है और उसकी प्राप्ति का रास्ता भी प्रेम है ! सारी व्याख्या प्रेम की है ! प्रेम ही दूसरा नाम आत्मा का है ! जो परमात्मा के गन हैं वो ही गुण प्रेमी के होने चाहिए !

----- गुरु वाणी -----

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज)

हम गुरु के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए उनका चरण स्पर्श करते हैं ! गुरुवाणी का एक बड़ा सुन्दर भजन है कि यदि जीवन का लक्ष्य प्राप्त करना है तो गुरु के चरणों को छुओ ! गुरु के चरण केवल शरीर के चरण नहीं हैं (लाभ इन शरीर के चरणों को छूने से भी होता है), किन्तु गुरुवाणी में जो संकेत हैं उसका अर्थ यह है कि गुरु के आत्मिक गुणों को अपने रोम-रोम में रमा लो, गुरु के सच्चे स्वरुप को अपने भीतर में बसा लो ! जब तक गुरु के आत्मिक गुणों को अपनायेंगे नहीं और अपने अनात्मिक अवगुणों को त्यागेंगे नहीं, तब तक विशेष आध्यात्मिक प्रगति नहीं होगी ! गुरु ईश्वर का प्रतिनिधिस्वरुप है ! गुरु के चरणों में माथा टेकने का सही मतलब यही है कि सबसे पहले हम अपने अहंकार को उनके चरणों में अर्पण कर दें ! हम अपने मन की बुराइयों को गुरु केचरण-रूपी गंगा में बहा दें ! उनके सद्गुणों की प्रसादी लें, उनकी निर्मलता लें, उनके गुणों कोअपनायें और हम भी गुरु जैसे हो जायें ! वास्तव में वैसे ही हम हैं भी, पर अहंकार के कारण हम समझते हैं कि हम शरीर है, हम मन या बुद्धि हैं ! कोई समझता है कि मेरी बुद्धि बड़ी तीव्र है, मैं तोअपनी बुद्धि के चातुर्य से दूसरों को प्रभावित कर लेते हूँ ! ये सब मन की बातें रास्ते की रुकावटें हैं,हमारे अहंकार को पोषित करती हैं ! अहंकार कम करने का सरल साधन है दीनता अपनाना ! दीनता है इस अहं भाव को छोड़ना ! दीनता यह नहीं है कि किसी को प्रभावित करने के लिए या उससे अपना कोई काम निकालने के लिए दो-चार मीठी-मीठी बातें कर लीं ! ये सूक्ष्म अहंकार है ! असली दीनता अपनाना औरअहंकार त्यागना यह है कि आपकी आत्मा के ऊपर जो आवरण पड़े हुए हैं, जो आपके बन्धन हैं,उनसे मुक्त होना है ! दीनता है अपने पृथक अस्तित्व को त्यागना, अपनी आत्मा को परमात्मा में मिला देना क्योंकि परमात्मा और हमारी जीवात्मा एक है ! आत्मा के ऊपर आवरण चढ़े हैं जिसके परिणामस्वरूप हम अपने वास्तविक स्वरुप को नहीं देख पाते हैं ! साधना करने का मतलब यही है कि हम कोई भी पद्धति अपनायें - चाहे सत्संग में जायें, मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्वारे में जायें, महापुरुषों की सेवा में जायें अथवा धर्मग्रन्थ पढ़ें – उसका परिणाम होना चाहिए कि हमारी आत्मा के ऊपर जो आवरण पड़े हुए हैं उनसे इसी जीवन में मुक्त हो जायें ! यही मुक्ति है ! जिसको इन आवरणों से जीते जी मुक्ति नहीं मिली, जिसने जीते-जी अपने निर्वाण यानी जीवन मुक्त होने की अनुभूति नहीं की है, वे यदि चाहें कि उनको शरीर छोड़ने के बाद मुक्ति मिल जायेगी, सो यह तो सम्भव नहीं है - अपने मन को भ्रम में रखना है ! (राम सन्देश :जुलाई-अगस्त, 1999.)

गुरु – वाणी

(ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज

मनुष्य के भीतर में अतीत का इतिहास लिखा है और मन स्वभाव-वश उसके प्रति संकल्प-विकल्प उठाकर दुखी होता है ! ईश्वर ने हम पर कृपा करी और रात बनाई और नींद का उपहार दिया ! परन्तु मनुष्य नींद में भी स्वप्न देखता है ! इसे सोना चाहिए, यह सोता नहीं - अर्थात मन से सोयें, मन को विश्राम दें,आनन्द के टिकाव के लिए ! इस हेतु अभ्यास भी यही है कि हम संसार, जो कि भीतर में भी है और बाहर भी है, से सो जायें, यानी विमुक्त हो जायें, और ईश्वर के प्रति निरन्तर जागरूक रहें ! चित्त की जो वृत्ति है, उससे जब तक हम मुक्त नहीं होते, शून्य नहीं होते, तब तक हम अपने जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकते !

****

सतगुरु के चरणों को कैसे पकड़ें ? मन को पहले निर्मल कर लें, वातावरण को भी कुछ योग्य (शुद्ध) बना लें. साधना में जिस वक़्त बैठें, प्रभु का गुणगान करें, स्तुति करें और हृदय की झोली को फैला कर बैठ जायें, शरीर को ढीला छोड़ दें. बिलकुल ढ़ीला, पुर्णतः relaxed. ईश्वर से प्रार्थना करें कि - हे प्रभु ! हमें अपना प्रेम प्रदान करें, हमें अपनी शरण में ले लें, हमें अपनी कृपा - प्रसादी प्रदान करें और मन ही मन उसका नाम लेते रहें. दो या तीन मिनिट बाद आप अनुभव करेंगे, बरसों की प्रतीक्षा की आवश्यकता नहीं है, उसी वक़्त तुरन्त आपको इसकी अनुभूति हो सकती है. आप देखेंगें कि दो तीन मिनिट बाद आपके शरीर में अन्दर और बाहर कुछ छू रहा है. यदि आप इसी प्रकार बैठे रहेंगे तो आप इस प्रसादी से, इस अमृत से, इस फैज़ से, भीग जायेंगे. आप जितना इस शरीर को ढ़ीला छोड़ेंगे, समर्पण भाव से बैठेंगे और यदि आपका मन भी शान्त होगा तो आपको गुरु चरणों की अनुभूति तुरन्त ही हो सकती है,

----